

मुकदमों का विवरण

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम.

गोरधन दास (डी) एल. आर. एस. और अन्य के माध्यम से (2014 की सिविल अपील No.8411)

19 अक्टूबर, 2023

[ऋषिकेश राँय और मनोज मिश्रा, जे. जे.] हेडनोट्स

विचार के लिए विषय: क्या भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही को यू/एस नोटिस देने में विफलता के लिए अमान्य घोषित किया जा सकता है। 52(2) राजस्थान शहरी सुधार अधिनियम, 1959 के उन मालिकों को, जिन्होंने भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू होने से पहले दो साल पहले पंजीकृत बिक्री विलेखों के माध्यम से भूमि खरीदी थी, भले ही मूल खतेदार का नाम राजस्व अभिलेखों में प्रतिबिंबित किया गया था; क्या दीवानी न्यायालय को एस के रूप में निषेधाज्ञा देने का अधिकार क्षेत्र है। 207 राजस्थान किरायेदारी अधिनियम, 1955 कृषि भूमि के संबंध में दीवानी न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को प्रतिबंधित करता है; और क्या निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा दीवानी न्यायालय में घोषणा की मांग किए बिना बनाए रखने योग्य था।

राजस्थान शहरी सुधार अधिनियम, 1959 -धारा 52-राजस्थान किरायेदारी अधिनियम, 1955 -धारा 207-भूमि का अनिवार्य अधिग्रहण-अधिसूचना से पहले मालिकों को नोटिस की सेवा की आवश्यकता-उक्त भूमि के संबंध में दीवानी अदालत का अधिकार क्षेत्र-तथ्यों पर, प्रत्यर्थियों ने पंजीकृत बिक्री विलेखों के माध्यम से भूमि खरीदी, हालांकि राजस्व अभिलेख में, मूल खतेदार-कार्यकाल धारकों का नाम वापस लिया गया था-दो साल बाद, भूमि अधिग्रहण कार्यवाही शुरू की गई जिसमें कार्यकाल धारकों को विधिवत नोटिस जारी किए गए थे और मुआवजे का भुगतान किया गया था-अपीलकर्ता-ट्रस्ट के खिलाफ मुकदमा दायर किया गया था जिसमें ट्रस्ट को विधि की उचित प्रक्रिया को अपनाए बिना भूमि में प्रवेश करने या अधिग्रहण करने से रोकने के लिए स्थायी निषेधात्मक निषेधाज्ञा की मांग की गई थी-मामला उच्च न्यायालय में पहुंचा जिसमें यह निर्णय लिया गया था कि अधिग्रहण अधिसूचना जारी की गई थी

520

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थू एलआरएस।

इस संबंध में कि क्या भूमि अधिग्रहण कार्यवाही को यू/एस नोटिस देने में विफलता के लिए अमान्य घोषित किया जा सकता है। 52(2) जिन भूमि मालिकों ने भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू होने से दो साल पहले पंजीकृत बिक्री विलेखों के माध्यम से भूमि खरीदी थी;

क्या दीवानी न्यायालय को निषेधाज्ञा देने का अधिकार क्षेत्र है; और क्या दीवानी न्यायालय में घोषणा की मांग किए बिना निषेधाज्ञा का मुकदमा बनाए रखने योग्य था:

आयोजित किया गया: ऋषिकेश राय के अनुसार, जे: उच्च न्यायालय के निर्णय को बरकरार रखते हुए, यह अभिनिर्धारित किया गया कि भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही को नोटिस देने की प्रक्रिया का पालन नहीं करने के लिए शुरू से ही अमान्य माना जाता है; कि किरायेदारी अधिनियम, 1955 के अंतर्गत राजस्व अदालत से प्राप्त की जा सकने वाली सीमित राहत को ध्यान में रखते हुए, भूमि हारने वालों को दीवानी अदालत में प्रवेश से वंचित करने से अन्याय बढ़ेगा, इस प्रकार, दीवानी अदालत को निषेधाज्ञा देने का अधिकार क्षेत्र है; और यह कि दीवानी अदालत में घोषणा की मांग किए बिना निषेधाज्ञा के मुकदमे का नेतृत्व किया जा सकता है [पैरा 10, 21, 38, 39 और 41]

मनोज मिश्रा के अनुसार, जे: उच्च न्यायालय के निर्णय को दरकिनार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया कि यदि भूमि मालिक अधिकारों के अभिलेख में अपने नामों में परिवर्तन नहीं करते हैं, तो राज्य को उनके स्वामित्व के बारे में कैसे पता चलेगा, इस प्रकार, केवल नोटिस की गैर-सेवा, यू/एस। 52(2) 1959 के अधिनियम का, गैर-अभिलिखित मालिकों पर, अधिग्रहण अधिसूचना को अमान्य नहीं करेगा; दीवानी न्यायालय के समक्ष उस मुकदमे को एस द्वारा वर्जित किया गया था। 207 1955 के अधिनियम का; और यह कि जिस विरचित में वाद तैयार किया गया था, वह न केवल एक घोषणात्मक राहत की मांग करने के लिए, बल्कि राज्य को एक पक्ष के विरचित में शामिल नहीं करने के लिए भी विचारणीय नहीं था- राय की भिन्नता को देखते हुए, मामले को एक बड़ी पीठ को भेजने के लिए भारत के मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखा जाना था- बड़ी पीठ को संदर्भ-भूमि अधिग्रहण। [पारस 51 और 64]

ऋषिकेश राय, जे. के निर्णय में शहरों और अन्य संदर्भों की सूची।

धुलाभाई बनाम मध्य प्रदेश राज्य (1968) 3 एस. सी. आर. 662; फर्म सेठ राधा किशन बनाम नगरपालिका समिति (1964) 2 एस. सी. आर. 273-पर भरोसा किया। भोला शंकर बनाम जिला भूमि अधिग्रहण कार्यालय, अलीगढ़ और अन्य। (1973) 2 एस. सी. सी. 59; बिहार राज्य बनाम धीरेंद्र कुमार (1995) 4 एस. सी. सी. 229; श्री सौरव जैन बनाम मेसर्स ए. बी. पी. डिजाइन और एक अन्य 2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी.

552 – प्रतिष्ठित।

522 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 14 एस. सी. आर.

विद्या देवी बनाम स्टेट ऑफ एच. पी. (2020) 2 एस. सी. सी. 569; आहूजा इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम.

कर्नाटक राज्य और अन्य (2003) 5 एस. सी. सी. 365; [2003] 3 एससीआर 351; सुख

दत्त रात्रा बनाम स्टेट ऑफ एच. पी. (2022) 7 एस. सी. सी. 508; डी. बी. बासनेट बनाम कलेक्टर, पूर्वी जिला, गंगटोक, सिक्किम (2020) 4 एस. सी. सी. 572; जगन सिंह

एंड कंपनी बनाम लुधियाना सुधार ट्रस्ट 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन 1144; एम. पी. आवास बोर्ड बनाम मोहम्मद।शैफ (1992) 2 एस. सी. सी. 168; रमेश गोबिंदराम बनाम सुग्रा हुमायूं मिर्जा (2010) 8 एस. सी. सी. 726; देवाजी बनाम गणपतलाल, ए. आई. आर. 1969 एस. सी. 560; श्री कंड्रेगुला श्रीनिवास जगन्नाथ राव पंतुलु बहादुर गारू बनाम ए. पी. राज्या , (1969) 3 एस. सी. सी. 71; अनाथुला सुधाकर बनाम पी. बुची रेड्डी (2008) 4 एस. सी. सी. 594; लक्ष्मी चंद बनाम ग्राम पंचायत करारिया (1996) 7 एस. सी. सी. 218; आयुक्त, बेंगलोर विकास प्राधिकरण और एक अन्य बनाम बृजेश रेड्डी और एक अन्य (2013) 3 एस. सी. सी. 66; मुंबई इंटरनेशनल एयरपोर्ट प्राइवेट लिमिटेड बनाम रीजेंसी कन्वेंशन सेंटर एंड होटल्स प्राइवेट लिमिटेड (2010) 7 एस. सी. सी. 417; नागपुर इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट बनाम विठ्ठल राव 6 (1973) 1 एस. सी. सी. 500; अर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट बनाम श्री पद्मानंद ए. आई. आर. 1980 राज 176; अर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट बनाम बेंगलोर डेवलपमेंट अथॉरिटी

मोहन लाल (2010) 1 एस. सी. सी. 512-संदर्भित।

संयुक्त फासीवाद विरोधी शरणार्थी समिति बनाम मैक ग्राथ 341 यूएस 123 (1951)

– संदर्भित किया गया। नमिता वाही, 'प्रॉपर्टी' सुजीत चौधरी, माधव खोसला, प्रताप में

भानु मेहता (संस्करण), द ऑक्सफोर्ड हैंडबुक ऑफ द इंडियन कांस्टीट्यूशन

(ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 2016); प्रीति संपत, 'परम शक्ति की सीमाएँ:

प्रख्यात क्षेत्र और भारत में भूमि का अधिकार '(2013) 48 आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक 40; उषा रामनाथन, लैला मेहता में प्रख्यात क्षेत्र का एक शब्द (संस्करण), विकास द्वारा विस्थापित: हाशिए का सामना करना

और लैंगिक अन्याय। (SAGE 2009); देबजानी भट्टाचार्य, 'इतिहास'

औपनिवेशिक विचार और विधि की व्यवहार में प्रख्यात क्षेत्र (2015) 50 आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक 45; विधि आयोग, 'अधिग्रहण का विधि '

और भूमि अधिग्रहण '(विधि आयोग सं. 10, 1977); संभव श्रीवास्तव

आदि।, ' भूमि अधिग्रहण और परिणामस्वरूप भूमि अधिग्रहण में समुदायों की सहमति लेने के लिए उचित प्रक्रिया का विध्वंस '(ऑक्सफैम 2020); नमिता वाही, अंकित भाटिया और अन्य, ' भारत में भूमि अधिग्रहण: सुप्रीम की समीक्षा

न्यायालय की मामले 1950-2016 '(नीति अनुसंधान केंद्र 2017)-संदर्भित। जूलियस एल. सैकमैन, रसेल डी. वैन ब्रंट, 'निकोल्स ऑन एमिनेन्ट डोमेन' खंड 1 (तीसरा संस्करण, मैथ्यू बेंडर एंड कंपनी, 1959)। § 1.11; टॉम एलन, द राइट

राष्ट्रमंडल संविधान में संपत्ति के लिए (कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय प्रेस)

2000) 172 – संदर्भित किया गया।

523

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस।

न्याय तक पहुँच सर्वेक्षण 2015-16 '(दक्षिण, मई 2016) <HTTPS:// दक्षिण भारत।ओ. आर. जी./डब्ल्यू. पी.-सामग्री/अपलोड/2016/05 दक्ष-न्याय तक पहुँच-सर्वेक्षण।पी. डी. एफ.> अभिगम 19 सितंबर 2023-संदर्भित।

मनोज मिश्रा के निर्णय में, जे.

आहुजा इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम.कर्नाटक राज्य और अन्य (2003) 5 एस. सी. सी. 365: [2003] 3 एस. सी. आर. 351; भोला शंकर बनाम जिला भूमि अधिग्रहण कार्यालय, अलीगढ़ और अन्य। (1973) 2 एस. सी. सी. 59; आयुक्त, बेंगलोर विकास प्राधिकरण और एक अन्य बनाम बृजेश रेड्डी और एक अन्य (2013) 3 एस. सी. सी. 66:[2013] 1 एस. सी. आर. 853; किरण सिंह बनाम चमन पासवान ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 340: [1955] एस. सी. आर. 117; मुंशी राम बनाम नगरपालिका समिति, छेहरता (1979) 3 एस. सी. सी. 83; धूलाभाई बनाम मध्य प्रदेश राज्य (1968) 3 एस. सी. आर. 662; फर्म सेठ राधा किशन बनाम नगरपालिका समिति (1964) 2 एस. सी. आर. 273; नवाबखान अब्बासखान बनाम गुजरात राज्य (1974) 2 एस. सी. सी. 121:[1974] 3 एस. सी. आर. 427; भारती रेड्डी बनाम कर्नाटक राज्य (2018) 6 एस. सी. सी. 162:[2018] 3 एस. सी. आर. 137; अनाथुला सुधाकर बनाम पी. बुची रेड्डी (2008) 4 एस. सी. सी. 594:[2008] 5 एस. सी. आर. 331; बिहार राज्य बनाम धीरेंद्र कुमार और अन्य (1995) 4 एस. सी. सी. 229:[1995] 3 एस. सी. आर. 857; लक्ष्मी चंद बनाम ग्राम पंचायत, करारिया (1996)

7 एससीसी 218:[1995] 4 पूरक।एससीआर 774; टी. अरिवंदम बनाम टी. वी. सतपाल और दूसरा (1977) 4 एस. सी. सी. 467:[1978] 1 एस. सी. आर. 742; श्री सौरव जैन और अन्य बनाम मेसर्स एबीपी। डिजाइन और एक और 2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 552; प्यारेलाल बनाम.

शुभेंद्र पिलानिया (2019) 3 एससीसी 692:[2019] 1 एस. सी. आर. 717; बैंक ऑफ बड़ौदा बनाम मोती बाई (1985) 1 एस. सी. सी. 475:[1985] 2 एस. सी. आर. 784-संदर्भित।

अन्य मामलों के विवरणों में आयातित आदेश और आवेदन आक्षेपित हैं

सिविल अपीलिय अधिकारिता 2014 का नागरिक आवेदन NO.8411

2004 के एस. बी. सी. आर. एस. ए. No.114 में जोधपुर में राजस्थान उच्च न्यायालय के दिनांकित 12.01.2010 के निर्णय और आदेश से

रूप:

अरुणेश्वर गुप्ता, वरिष्ठ अधिवक्ता, हिमांशु चौरवेदी, अभिषेक शर्मा, राजीव सिंह, अधिवक्ता।
अपीलार्थी के लिए।

मनोज स्वरूप सीनियर एड., अचल सिंह बुले, निखिल कुमार सिंह, सुधांशु खंडेलवाल, ऋषि
मटोलिया, एड.उत्तरदाताओं के लिए।

524 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 14 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

निर्णय

ऋषिकेश रॉय, जे. फैक्टुअल बैकड्रॉप

1. यहाँ चुनौती जोधपुर में राजस्थान के उच्च न्यायालय द्वारा 2004 की एस. बी. सिविल
नियमित दूसरी अपील में दिए गए उस निर्णय को दी गई है जिसमें उच्च न्यायालय ने प्रथम
अपीलीय न्यायालय के निर्णय को बरकरार रखा और कहा कि अधिग्रहण की कार्यवाही
अमान्य है क्योंकि उन मालिकों को नोटिस नहीं दिया गया था जो कब्जे में थे, लेकिन मूल
खतेदारों को दिया गया था जिनके नाम राजस्व रिकॉर्ड में मौजूद थे।
2. प्रतिवादी गोरधन दास ने इस मामले को पेश करते हुए नियमित दीवानी मुकदमा सं.
03/04 का नेतृत्व किया कि वादी और प्रतिवादी सं.2 4 ने संयुक्त रूप से बीकानेर शहर में दो
किशतों में 3 बीघा जमीन खरीदी। दिनांक 2.3.1970 के पंजीकृत बिक्री विलेख अंतर्गत ढाई
बीघा जमीन पहली बार खरीदी गई थी और दूसरे पंजीकृत बिक्री विलेख दिनांक 16.3.1970
अंतर्गत एक और आधी बीघा जमीन एक लाल खान से खरीदी गई थी। वादी और प्रतिवादी
एनओएस। 2 से 4 इस प्रकार खरीदी गई भूमि के उक्त तीन बीघा के संयुक्त खतेदार बन
गए। जबकि खरीदारों के पास खसरा नं. वाली भूमि का शांतिपूर्ण कब्जा था। 211/81 और
239/83, प्रतिवादी नं। 1 यानी अर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर ने इस भूमि पर दावा करना
शुरू कर दिया कि उन्होंने उक्त भूमि का अधिग्रहण कर लिया है। प्रारंभ में, प्रतिवादी नं. को
रोकने के लिए स्थायी निषेधाज्ञा की मांग करते हुए मुकदमा दायर किया गया था। 1 भूमि में
अतिक्रमण करने और किसी भी अधिग्रहण प्रक्रिया को शुरू करने से, लेकिन बाद में जब
प्रतिवादी नं। 1 मुकदमे के लंबित रहने के दौरान भूमि पर जबरन कब्जा प्राप्त करने की
कोशिश कर रहा था, वादी ने अनिवार्य निषेधाज्ञा के माध्यम से कब्जे की बहाली को सुरक्षित
करने के लिए 11.11.2002 पर मुकदमे में संशोधन किया। यह भी अनुरोध किया गया कि
26.2.1998 (WP) दिनांकित निर्णय के आधार पर

2243/95) भंवरलाल बनाम राजस्थान राज्य में, किसी अन्य भूमि के संबंध में,

प्रतिवादी नं. 1 ने वादी की भूमि पर कब्जा कर लिया था और यह कि वादी दीवानी मुकदमे
के लंबित रहने के दौरान 9.6.1998 तक कब्जे का आनंद ले रहा था। लिखित बयान में, अर्बन

इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट ने स्वीकार किया कि वादी ने प्रतिवादी संख्या के साथ मिलकर 12 4 से कुल 3 बीघा 525 खरीदे गए

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थू एलआरएस। [ऋषिकेश रॉय, जे.]
526

दिनांक 2.3.1970 और 16.3.1970 के 2 बिक्री विलेखों के माध्यम से भूमि की बिक्री, और वे बिक्री विलेख उप-पंजीयक, बीकानेर के कार्यालय में पंजीकृत हैं। प्रतिवादी नं.1 यह भी स्वीकार किया कि वादी ने जिला मजिस्ट्रेट के समक्ष एक बीघा भूमि को गैर-कृषि श्रेणी में बदलने के लिए एक आवेदन प्रस्तुत किया, जिस पर जिला मजिस्ट्रेट ने एनओसी जारी की क्योंकि पेट्रोल पंप स्थापित करने के लिए उक्त भूमि की आवश्यकता थी। संबंधित भूमि पर अपने अधिकार का अनुमान लगाते हुए, प्रतिवादी नं.1 लिखित बयान में दावा किया गया कि उन्होंने 24 बीघा 12 बिसवा भूमि का अधिग्रहण किया था जिसमें खसरा No.294/82 शामिल था और मूल खतेदार को आवश्यक मुआवजा दिया गया था। इसलिए, वादी या प्रतिवादी को कोई मुआवजा देय नहीं है। 2 4 ने 3 बीघा जमीन खरीदी थी। 3. विचारण न्यायालय ने प्रतिद्वंद्वी दलीलों के आधार पर निम्नलिखित मुद्दों को विरचित किया:

“(i) क्या वाद के पैरा 1,1 (ए), 1 (बी) अंतर्गत उल्लिखित संपत्तियाँ वादी और प्रतिवादी नं.2 4 तक? (ii) क्या उपर्युक्त भूमि में से दो बीघा भूमि का गलत तरीके से प्रतिवादी नं.1?

((iii) क्या प्रतिवादी नं.1 पैरा सं. के अनुसार सूट भूमि पर गलत तरीके से कब्जा प्राप्त कर लिया है। 9 शिकायत में से, वादी उसी को बहाल करने का हकदार है?

(iv) क्या लिखित कथन के पैरा No.115 के अनुसार वैध प्रक्रिया को अपनाते हुए 24 बीघा 12 बिसवा सूट भूमि का अधिग्रहण करने वाले संबंधित लोगों को पहले ही मुआवजे का भुगतान किया जा चुका है?

(v) राहत? ”

4. विद्वत अतिरिक्त सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ प्रभाग) बीकानेर ने प्रतिवादी नं.1 यह अभिनिर्धारित करके कि वादी खसरा No.284/83 में पेट्रोल पंप के लिए 1 बीघा भूमि का कब्जा प्राप्त करने का हकदार है। हालाँकि, शेष वाद भूमि के लिए, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रतिवादी नं.1 उक्त भूमि का अधिग्रहण किया था और तदनुसार 2 बीघा भूमि के लिए वादी का मुकदमा खारिज कर दिया गया था। 1 बीघा भूमि के लिए राहत देते हुए, विद्वत विचारण न्यायाधीश ने नोट किया कि राज्य सरकार से उचित अनुमति के बाद वादी को इसका कब्जा बहाल कर दिया गया था और इसलिए

उनका स्वामित्व अबाधित रहा। शेष 2 बीघा भूमि के लिए, राहत देने से इनकार कर दिया गया और यह माना गया कि भले ही उक्त भूमि 1970 में पंजीकृत बिक्री विलेखों के माध्यम से खरीदी गई थी, लेकिन नए मालिकों के नाम राजस्व अभिलेख में परिवर्तित नहीं किए गए थे, जो पिछले मालिक (विक्रेता) के नाम को दर्शाते रहे, जिसे मुआवजा दिया गया था। आगे यह अभिनिर्धारित किया गया कि स्वामित्व साबित करने, मुआवजे का दावा करने और जामबंदी में अपना नाम दर्ज कराने की जिम्मेदारी वादी पर थी।

5. इसके बाद वादी ने जिला न्यायाधीश, बीकानेर के समक्ष एक अपील का नेतृत्व किया और विद्वान अपीलीय न्यायालय ने अपने दिनांक 1 के निर्णय द्वारा वादी के पक्ष में और प्रतिवादी नं.1 और प्रतिवादी को वादी के शांतिपूर्ण कब्जे, उपयोग और वाद भूमि के कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोक दिया गया था। अपीलीय न्यायालय ने यह देखते हुए वादी के पक्ष में निष्कर्ष निकाला कि वादी को भूमि के अधिग्रहण के लिए सुनवाई का कोई अवसर प्रदान नहीं किया गया था और इसके अलावा, वादी, गोरधन दास 10.6.1988 तक भूमि के निर्बाध कब्जे का आनंद ले रहे थे। खरीदारों द्वारा राजस्व अभिलेख में उत्परिवर्तन सुधार नहीं किए जाने के बावजूद, अपीलीय न्यायालय ने नोट किया कि वादी ने पहले ही जिला मजिस्ट्रेट के समक्ष पेट्रोल पंप स्थापित करने के लिए 1 बीघा भूमि के रूपांतरण के लिए आवेदन किया था और उक्त उद्देश्य के लिए एन. ओ. सी. प्रतिवादी के सक्रिय सहयोग से वादी के पक्ष में जारी किया गया था और इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला गया कि वादी के स्वामित्व और कब्जे की जानकारी के बावजूद, प्रतिवादी नं.1 भूमि मालिक/वादी को नोटिस जारी करने के अपने कर्तव्य का निर्वहन नहीं किया और तदनुसार भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही को अमान्य माना गया। इसके अलावा, चूंकि मुकदमे के लंबित रहने के दौरान वादी को उच्च न्यायालय के किसी अन्य निर्णय की आड़ अंतर्गत भूमि से जबरन बेदखल कर दिया गया था, इसलिए अदालत ने राय दी कि मालिक को नोटिस के साथ उचित अधिग्रहण कार्यवाही के बिना, वादी (जो आई. डी. 1 तक निर्बाध कब्जे का आनंद ले रहा था) के कब्जे को बाधित नहीं किया जा सकता था। यह आगे नोट किया गया कि न तो वादी को कोई अधिग्रहण नोटिस जारी किया गया था और न ही उन्हें कोई अधिग्रहण मुआवजा दिया गया था, हालांकि वे भूमि के वास्तविक मालिक थे। इस दावे पर कि मुआवजे का भुगतान किया गया था, न्यायालय ने राय दी कि यह लिखित बयान में एक अस्पष्ट विवाद था और यह स्पष्ट रूप से उल्लेख नहीं किया गया था कि किसे मुआवजे का भुगतान किया गया था और न ही प्रतिवादी द्वारा इस तरह के भुगतान पर कोई सबूत पेश किया गया था।

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [ऋषिकेश रॉय, जे.]
528

नंबर 1. यह भी पाया गया कि प्रतिवादी नं.1। वाद के लंबित रहने के दौरान वादी को उचित कानूनी प्रक्रिया के बिना, यानी नोटिस की सेवा के बिना, सुनवाई का अवसर प्रदान किए

बिना और वादी को मुआवजे का भुगतान किए बिना, अपनी संपत्ति से जबरन बेदखल कर दिया था, और इस प्रकार, प्रतिवादी सं।1 अमान्य घोषित कर दिए गए। इस प्रकार वादी की अपील को स्वीकार करते हुए विचारण न्यायालय की तारीख 23.2.2004 की डिक्री को रद्द कर दिया गया। तदनुसार प्रतिवादी सं. के विरुद्ध वादी के पक्ष में स्थायी निषेधाज्ञा की डिक्री दी गई थी।¹¹ और यह आगे आदेश दिया गया कि प्रतिवादी नं।1 पैरा नं. में उल्लिखित सूट भूमि को पुनर्स्थापित करना है।¹¹ (ए) और 1 (बी) और उन्हें वादी द्वारा उक्त भूमि के उपयोग और कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोक दिया गया था।

6. प्रतिवादी नं.1 अर्थात् अर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर ने अपील डिक्री No.30/04 में 16.4.2004 दिनांकित निर्णय और डिक्री पर हमला किया। उच्च न्यायालय ने दूसरी अपील में कहा कि प्रतिवादी नं।1 लिखित बयान में स्वीकार किया गया था कि वादी ने प्रतिवादी संख्या के साथ मिलकर 12 4 तक सूट भूमि के मालिक हैं। इसलिए, यह अभिनिर्धारित किया गया कि स्वामित्व घोषणा की राहत की मांग किए बिना निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा बनाए रखने योग्य है क्योंकि प्रतिवादी नं।1 वादी और प्रतिवादी द्वारा खरीदी गई भूमि पर किसी भी अधिकार का दावा नहीं करता है।¹² 4, वर्ष 1970 में दो पंजीकृत बिक्री विलेखों के माध्यम से। चूंकि वादी प्रतिवादी संख्या के साथ मिलकर 12 4 ने वर्ष 1970 में खरीद द्वारा वैध अधिकार प्राप्त किया था और शांतिपूर्ण कब्जे में थे, उन्हें अधिकार की घोषणा से राहत लेने की आवश्यकता नहीं थी, विशेष रूप से जब प्रतिवादी नं।1.

7. उच्च न्यायालय ने राजस्थान शहरी सुधार अधिनियम, 1959 (इसके बाद "1959 अधिनियम" के रूप में संदर्भित) के प्रावधानों को स्वीकार किया और कहा कि धारा 52 के अंतर्गत भूमि के अनिवार्य अधिग्रहण के लिए, धारा 52 के अंतर्गत उप-धाराओं में निर्धारित प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिए जैसे कि नोटिस देना और मालिक और/या किसी अन्य इच्छुक व्यक्ति को सुनवाई का अवसर प्रदान करना और धारा 53 के अंतर्गत मालिक को मुआवजा भी दिया जाना चाहिए। हालाँकि, चूंकि प्रतिवादी नं।1 1959 के अधिनियम की धारा 52 और 53 के अंतर्गत अनिवार्य प्रावधानों का पालन करने में विफल रहा और उस अधिग्रहण प्रक्रिया को वादी द्वारा भूमि की खरीद के बहुत बाद शुरू किया गया था, नोटिस और मुआवजे के अभाव में अधिग्रहण की कार्यवाही को अमान्य और अमान्य घोषित कर दिया गया था। यह विशेष रूप से नोट किया गया था

/

[2023] 14 एस सी आर।

कि प्रतिवादी नं। 1 ने अपने लिखित बयान में वादी के कब्जे और अधिकार को स्वीकार किया और इस प्रकार यह राय दी गई कि वादी अपनी संपत्ति की रक्षा करने का हकदार है। जैसा कि प्रतिवादी नं।1 दीवानी न्यायालय के अधिकार क्षेत्र पर प्रश्न उठाने वाला एक मुद्दा भी उठाया था, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि दीवानी न्यायालय में एक मुकदमा हमेशा एक क़ानून द्वारा बनाए गए न्यायाधिकरण के आदेश पर प्रश्न उठाने के लिए झूठ

बोलेगा, भले ही उसका आदेश स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ द्वारा किया गया हो, यदि उक्त न्यायाधिकरण अपनी शक्ति का दुरुपयोग करता है या अपने प्रावधानों का उल्लंघन करते हुए कार्य करता है। नतीजतन, प्रतिवादी सं. के नेतृत्व में दूसरी अपील।। प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा वादी के पक्ष में पारित आदेश को बरकरार रखते हुए खारिज कर दिया गया था।

B. प्रस्तुतियाँ

8. उच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णय को चुनौती देते हुए, अपीलार्थी की ओर से वरिष्ठ वकील श्री अरुणेश्वर गुप्ता ने तर्क दिया कि अधिसूचना दिनांक 1 के अनुसार, मूल खतेदारों को सार्वजनिक नोटिस और व्यक्तिगत नोटिस जारी किए गए थे जिनके नाम राजस्व अभिलेख में थे। मुआवजे की राशि का भी विधिवत भुगतान किया गया था। अधिकारों के अभिलेख में मूल खतेदारों को नोटिस देना पर्याप्त था क्योंकि राज्य सरकार भूमि के स्वामित्व के बारे में घूम-घूम कर या सीधे तौर पर जांच करने के लिए उत्तरदायी नहीं है। दूसरा, अधिग्रहित भूमि का खरीदार 'कोई अन्य इच्छुक व्यक्ति' है और वह 1959 के अधिनियम की धारा 52 (3) के अंतर्गत आपत्तियां उठा सकता था। 23 साल की समाप्ति के बाद भूमि अधिग्रहण को चुनौती देने का कोई अधिकार नहीं है क्योंकि स्थायी निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा 21.4.1997 पर दायर किया गया था। (आहूजा इंडस्ट्रीज

लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य 1; भोला शंकर बनाम द डिस्ट। भूमि अधिग्रहण

आधिकारिक तौर पर 2)। तीसरा, यह तर्क दिया गया कि भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 अपने आप में एक पूर्ण संहिता है और इस प्रकार, आवश्यक निहितार्थ से सिविल न्यायालय के पास पहले से अधिग्रहित भूमि के लिए निषेधाज्ञा पारित करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। अंत में, यह तर्क दिया गया कि 1959 के अधिनियम के अंतर्गत अधिग्रहित भूमि की प्रकृति 'कृषि भूमि' थी क्योंकि इसे 'गैर-कृषि भूमि' के लिए परिवर्तित नहीं किया गया था

भूमि राजस्व अधिनियम, 1956 की धारा 90-ए का उपयोग करें। धारा 207 के कारण राजस्थान किरायेदारी अधिनियम, 1955 (इसके बाद "किरायेदारी अधिनियम, 1955")

1 2003 5 एस. सी. सी. 365 2 (1973) 2 एस. सी. सी. 59 529

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थू एलआरएस। [ऋषिकेश रॉय, जे.] 530

कृषि भूमि के संबंध में अस्थायी और स्थायी निषेधाज्ञा से संबंधित मामले में तीसरी अनुसूची की प्रविष्टि 8 ए और प्रविष्टि 23 सी की सुनवाई और निर्धारण केवल राजस्व न्यायालय द्वारा किया जा सकता था। आर. टी. कृषि भूमि पर स्थायी निषेधाज्ञा के लिए कोई दीवानी मुकदमा बनाए रखने योग्य नहीं है।

9. इसके विपरीत विचार व्यक्त करते हुए, प्रत्यर्थियों के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री मनोज स्वरूप ने तर्क दिया कि राजस्व अधिकारियों यानी पटवारियों, तहसीलदारों और कलेक्टर को वादी के अधिकारों और हितों का ज्ञान था। 1959 के अधिनियम की धारा 52 (2) के अंतर्गत आवश्यकताओं के अनुसार, न केवल भूमि के मालिक को बल्कि किसी अन्य व्यक्ति को भी नोटिस दिया जाना चाहिए जो राज्य सरकार की राय में उसमें रुचि रखता है। विद्वान वकील ने तहसीलदार, बीकानेर से बिक्री विलेखों को स्वीकार करते हुए पत्र दर्ज किए हैं, जिससे संकेत मिलता है कि उन्हें वादी के भूमि पर कब्जे के बारे में जानकारी थी। रिलायंस को भी रखा गया था

आहूजा इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य 3 में इस न्यायालय का निर्णय।

रखरखाव के पहलू पर, यह प्रचार किया गया कि दीवानी मुकदमे को विवाद पर निर्णय लेने के लिए विधि ी रूप से वर्जित नहीं किया गया था। इसकी पुष्टि करने के लिए, श्री स्वरूप ने धूलाबाई और अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य 4 (इसके बाद "धूलाबाई" के रूप में संदर्भित) में इस न्यायालय के संविधान पीठ के फैसले का हवाला दिया है।

और फर्म सेठ राधा किशन बनाम प्रशासक 5.

ग. मुद्दे

10. संबंधित पक्षों की दलीलों को संक्षेप में प्रस्तुत करने के बाद, निम्नलिखित प्रश्न हमारे विचार के लिए आते हैं:

क) क्या भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू होने से पहले, दो साल पहले पंजीकृत बिक्री विलेखों के माध्यम से भूमि खरीदने वाले मालिकों को नोटिस देने में विफलता के लिए भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही को अमान्य घोषित किया जा सकता है, भले ही मूल खतेदार का नाम राजस्व रिकॉर्ड में लिखा गया था?

ख) क्या सिविल न्यायालय को अधिदेश देने का अधिकार क्षेत्र है क्योंकि किरायेदारी अधिनियम, 1955 की धारा 207 कृषि भूमि के संबंध में सिविल न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को रोकती है?

3 (2003) 5 एस. सी. सी. 365 4 (1968) 3 एस. सी. आर. 3 662 5 (1964) 2 एस. सी. आर. 273

/

[2023] 14 एस सी आर।

ग) क्या वादी का निषेधाज्ञा का मुकदमा दीवानी न्यायालय में घोषणा की मांग किए बिना बनाए रखा जा सकता है?

D. भूमि अधिग्रहण कार्यवाहियों में सूचना की आवश्यकताएँ

i) संपत्ति का संवैधानिक अधिकार और प्रक्रियात्मक न्याय

11. यह भूमि के अनिवार्य अधिग्रहण का मामला है जहां भूमि मालिक के पास इस मामले में कोई विकल्प नहीं है। प्रत्यर्थी ने मूल्यवान विचार के लिए संबंधित भूमि खरीदी और भूमि के शांतिपूर्ण कब्जे में था। उस स्तर पर, अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को बेदखल करने का प्रयास किया। सार्वजनिक उद्देश्य के लिए भूमि अधिग्रहण की अनुमति विधि द्वारा दी गई है, लेकिन अधिग्रहण प्राधिकरण को अनिवार्य अधिग्रहण के लिए वैधानिक व्यवस्था का पालन सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। केवल प्रक्रिया के कड़ाई से पालन से, भूमि मालिकों और इच्छुक व्यक्तियों को संरक्षण का एक उपाय दिया जाता है, और उसमें निहित प्रक्रिया में निष्पक्षता होती है। आखिरकार, संविधान के अनुच्छेद 300 ए के अंतर्गत संवैधानिक अधिकारों के संरक्षण से संबंधित है।

12. इस संदर्भ में, सुख दत्त रात्रा बनाम स्टेट ऑफ एच. पी. 6 में इस न्यायालय की हालिया टिप्पणियाँ, इस बात पर विचार किया जाएगा कि न्यायालय ने 1700 के दशक से संपत्ति के अधिकार की मान्यता का पता लगाया है और वैधता की उच्च सीमा को दोहराया है जिसे किसी व्यक्ति को उनकी संपत्ति से बेदखल करने के लिए संतुष्ट किया जाना चाहिए:

“13. जबकि संपत्ति का अधिकार अब एक मौलिक अधिकार नहीं है [“संविधान (चालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978”], यह ध्यान रखना उचित है कि विषय भूमि के बेदखल होने के समय, यह अधिकार अभी भी संविधान के भाग III में शामिल था। जब तक विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार न हो, तब तक संपत्ति से वंचित होने के खिलाफ अधिकार अनुच्छेद 300-ए के अंतर्गत एक संवैधानिक अधिकार बना हुआ है।

14. यह विधि के शासन का मूल सिद्धांत है कि किसी को भी उचित प्रक्रिया या विधि के प्राधिकरण के बिना स्वतंत्रता या संपत्ति से वंचित नहीं किया जा सकता है। इसकी मान्यता 1700 के दशक में एंटिक बनाम कैरिंगटन [एंटिक बनाम कैरिंगटन, 1765] में राजा की पीठ के फैसले से शुरू होती है।

6 (2022) 7 एससीसी 508 531

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [ऋषिकेश रॉय, जे.] 532 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 14 एस. सी. आर.

ईडब्ल्यूएचसी (केबी) जे98:95 ई. आर. 807] और इस न्यायालय द्वारा वजीर चंद बनाम एच. पी. राज्य मामले में। [वजीर चंद बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य, (1955) 1 एस. सी. आर. 408:ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 415] इसके अलावा, कई निर्णयों में, इस न्यायालय ने बार-बार यह अभिनिर्धारित किया है कि उदारता के व्यापक बैंडविड्थ का आनंद लेने के बजाय, राज्य की अक्सर यह प्रदर्शित करने में अधिक जिम्मेदारी होती है कि उसने वैधता की सीमा के भीतर काम किया है, और इसलिए, विधि के शासन के मूल सिद्धांत को कलंकित नहीं किया है।

15. जब निजी संपत्ति के विषय की बात आती है, तो इस न्यायालय ने वैधता की उच्च सीमा को बरकरार रखा है जिसे किसी व्यक्ति को उनकी संपत्ति से बेदखल करने के लिए पूरा किया जाना चाहिए, और इससे भी अधिक जब राज्य द्वारा किया जाता है। "13. भारत में भूमि अधिग्रहण विधि ों की उत्पत्ति ब्रिटिश औपनिवेशिक विधि में हुई है। भूमि का अनिवार्य अधिग्रहण प्रतिष्ठित क्षेत्र के सिद्धांत पर आधारित है जिसे 'सार्वजनिक उद्देश्य' के लिए मालिक की सहमति के बिना निजी संपत्ति हासिल करने की राज्य की शक्ति के रूप में समझा जा सकता है। 7. इस प्रकार, जब राज्य अपनी प्रमुख क्षेत्र शक्तियों का प्रयोग करते हुए संपत्ति का अधिग्रहण करता है, तो मालिक द्वारा किए गए आर्थिक नुकसान के बाद राज्य को संबंधित आर्थिक लाभ होता है। राज्य संपत्ति के साथ ऐसे व्यवहार करता है जैसे कि वह संपत्ति का मालिक हो। प्रतिष्ठित क्षेत्र के सिद्धांत पर विद्वानों के लेखन ने इस विषय पर प्रकाश डाला है। इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली 10 में प्रकाशित "हिस्ट्री ऑफ़ एमिनेन्ट डोमेन इन कॉलोनीयल थॉट एंड लीगल प्रैक्टिस" शीर्षक वाले एक लेख में, लेखक ने नैतिकता और न्याय के चश्मे से अनिवार्य अधिग्रहण पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता पर प्रतिष्ठित डोमेन रिफिल एक्ट के सिद्धांत की आलोचना करते हुए कहा। इसका उल्लेख करते हुए

भारत के विधि आयोग की दसवीं रिपोर्ट में प्रारंभिक अनुच्छेद:

7 जूलियस एल. सैकमैन, रसेल डी. वैन ब्रंट, 'निकोल्स ऑन एमिनेन्ट डोमेन' खंड 1 (तीसरा संस्करण, मैथ्यू बेंडर एंड कंपनी, 1959)। § 1.11

8 नमिता वाही, 'प्रॉपर्टी' सुजीत चौधरी, माधव खोसला, प्रताप भानु मेहता में

(एड्स), द ऑक्सफोर्ड हैंडबुक ऑफ़ द इंडियन कांस्टीट्यूशन (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस)

2016)

9 टॉम एलन, राष्ट्रमंडल संविधान में संपत्ति का अधिकार (कैम्ब्रिज)

यूनिवर्सिटी प्रेस 2000) 172; प्रीति संपत, 'परम शक्ति की सीमाएँ: प्रख्यात क्षेत्र और भारत में भूमि का अधिकार (2013) 48 आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक 40; उषा रामनाथन, लैला मेहता में प्रख्यात क्षेत्र का एक शब्द (संस्करण), द्वारा विस्थापित

विकास: हाशिए पर रहने और लैंगिक अन्याय का सामना करना। (SAGE 2009)

10 देबजानी भट्टाचार्य, 'औपनिवेशिक विचार और कानूनी व्यवहार में प्रख्यात क्षेत्र का इतिहास' (2015) 50 आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक 45।

भूमि अधिग्रहण और अधिग्रहण का विधि (1958) 11 भूमि से संबंधित

अधिग्रहण जिसके अनुसार "इस (अनिवार्य भूमि अधिग्रहण) शक्ति के विकास के विभिन्न चरणों की महत्वपूर्ण परीक्षा और इसके नैतिक आधार से कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा नहीं होगा क्योंकि सभी सभ्य देशों में शक्ति स्थापित की गई है", लेखक नैतिकता पर प्रथागत प्रथाओं को दी गई प्राथमिकता पर सवाल उठाता है। मनमानी कार्रवाई से बचने के लिए प्रतिष्ठित क्षेत्र की शक्ति पर ठोस सीमाएँ होनी चाहिए। भूमि अधिग्रहण प्रक्रिया में निष्पक्षता

और पारदर्शिता प्राप्त करने के लिए प्रक्रिया का कड़ाई से पालन एक आवश्यक सुरक्षा है। इस तरह की प्रक्रियाएं भूमि मालिकों और इच्छुक व्यक्तियों को यह कहने का उचित अवसर प्रदान करती हैं कि उनकी भूमि का अधिग्रहण क्यों नहीं किया जाना चाहिए और यह भी कि क्या उनकी भूमि के लिए मूल्यांकन किया गया मुआवजा पर्याप्त है। भूमि हारने वाले को प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपायों से इनकार करने का मतलब होगा कि उसके लिए न्याय के दरवाजे बंद हैं। मेरे विचार से इस तरह की व्याख्या से बचना चाहिए।

(ii) अनिवार्य भूमि अधिग्रहण पर अंतर्राष्ट्रीय कानूनी ढांचा

14. भूमि अधिग्रहण कार्यवाही की वैधता के मुद्दे से निपटने के लिए आगे बढ़ने से पहले, अनिवार्य भूमि अधिग्रहण पर अंतर्राष्ट्रीय कानूनी ढांचा निर्धारित करना उचित होगा। आत्मनिर्णय का अधिकार संयुक्त राष्ट्र के चार्टर, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय वाचा (आई. सी. ई. एस. सी. आर.) और नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय वाचा (आई. सी. सी. पी. आर.) के भीतर अन्य उपकरणों के साथ निहित है, जिसे सभी लोगों के अपने प्राकृतिक धन और संसाधनों का स्वतंत्र रूप से निपटान करने के अधिकार के रूप में परिभाषित किया गया है, और यह कि कोई भी व्यक्ति अपने स्वयं के निर्वाह के साधनों से वंचित नहीं हो सकता है। मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के अनुच्छेद 17 में कहा गया है, "हर किसी को अकेले और दूसरों के साथ मिलकर संपत्ति रखने का अधिकार है। किसी को भी मनमाने ढंग से उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा।" आत्मनिर्णय में राज्यों के लिए किसी भी जबरन कार्रवाई से बचने का दायित्व भी शामिल है जो लोगों को ऐसे अधिकारों का आनंद लेने से वंचित करता है। अंतर्राष्ट्रीय विकास विधि के भीतर निशुल्क पूर्व और सूचित सहमति (एफ. पी. आई. सी.) की अवधारणा को स्वदेशी लोगों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र घोषणा में सबसे स्पष्ट रूप से कहा गया है।

11 विधि आयोग, 'भूमि अधिग्रहण और अधिग्रहण का विधि' (विधि आयोग सं. 10, 1977).

533

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [ऋषिकेश राय, जे.] 534 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 14 एस. सी. आर.

अनुच्छेद 10, 11, 19, 28 और 29 उन स्थितियों को निर्धारित करता है जिनमें क्षतिपूर्ति देने, स्वदेशी संपत्ति लेने आदि से पहले एफ. पी. आई. सी. प्राप्त किया जाना चाहिए। विकास विशेषज्ञों ने माना है कि एफ. पी. आई. सी. न केवल स्वदेशी लोगों के लिए महत्वपूर्ण है, बल्कि किसी भी प्रस्तावित विकास के बारे में निर्णय लेने में स्थानीय समुदायों को शामिल करने के लिए एक सकारात्मक दृष्टिकोण के रूप में भी इस्तेमाल किया जा सकता है। इस तरह की प्रक्रियाओं में उन्हें शामिल करने से स्वामित्व और जुड़ाव की अधिक भावना को बढ़ावा मिलता है और इसके अलावा, एक बुनियादी मानवाधिकार सिद्धांत के रूप में विकास के उनके अधिकार की रक्षा करने में मदद मिलती है। ये सिद्धांत भूमि अधिग्रहण

अधिनियम, 1984 के अंतर्गत नहीं पाए जाते हैं, लेकिन सहमति और सामाजिक प्रभाव मूल्यांकन (एस. आई. ए.) के माध्यम से भूमि अधिग्रहण की अवधारणा को इस बात पर जोड़ा गया है कि क्या कोई परियोजना "सार्वजनिक उद्देश्य" को पूरा करती है या नहीं।

भूमि अधिग्रहण अधिनियम। इसलिए, भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्वास में उचित मुआवजे और पारदर्शिता का अधिकार अधिनियम,

2013 निष्पक्षता की धारणा के प्रति अधिक अभ्यस्त पाया जाता है और इस हद तक प्रगतिशील है।

15. जबकि अधिग्रहण व्यवस्था का पालन करने में अधिकारियों के विफल रहने के कई उदाहरण हैं, इस न्यायालय को नीति अनुसंधान केंद्र 13 के भूमि अधिकार पहल द्वारा किए गए एक अध्ययन का लाभ मिला है। भारत में भूमि अधिग्रहण मामलों के कानूनी प्रक्षेपवक्र पर 1950 से 2016 के बीच भारत के सर्वोच्च न्यायालय के लगभग 1269 फैसलों के व्यापक अध्ययन के परिणाम निम्नलिखित टिप्पणियों की ओर ले जाते हैं:

“भारत में भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया लगभग दो सौ वर्षों से बढ़ती राजनीतिक और कानूनी प्रतिस्पर्धा का स्रोत रही है। यह प्रक्रिया की स्वाभाविक रूप से जबरदस्त प्रकृति से उपजी है, जो राज्य और भूमि हारने वालों के बीच सत्ता में गंभीर असंतुलन पैदा करती है। 1950 में भारत के संवैधानिक गणराज्य बनने के बाद से सर्वोच्च न्यायालय की याचिका की हमारी समीक्षा से पता चलता है कि इस असंतुलन का अधिकांश हिस्सा भूमि अधिग्रहण के मूल पाठ के भीतर ही पैदा किया गया था

12 संभव श्रीवास्तव आदि।, ‘भूमि अधिग्रहण और परिणामस्वरूप भूमि अधिग्रहण में समुदायों की सहमति लेने के लिए उचित प्रक्रिया का विध्वंस’ (ऑक्सफैम 2020) // नीति-अभ्यास। ऑक्सफैम।org/संसाधनों/कारण-प्रक्रिया का विध्वंस-मांग के लिए-समुदायों की सहमति-भूमि-अधिग्रहण-621109/> को 19 सितंबर 2023 को एक्सेस किया गया। 13 नमिता वाही, अंकित भाटिया और अन्य, ‘भारत में भूमि अधिग्रहण: उच्चतम न्यायालय के मामलों की समीक्षा 1950-2016’ (नीति अनुसंधान केंद्र 2017)

अधिनियम, इसका एक बड़ा हिस्सा विधि के शासन के साथ कार्यकारी गैर-अनुपालन के लिए भी जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। परिणाम यह हुआ कि

भूमि हारने वालों के लिए बड़ी असमानता "

[जोर दिया गया] 16. उच्चतम न्यायालय ने हाल के एक निर्णय में अनिवार्य भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया को देखने का अवसर दिया था, जहां भूमि मालिकों के पास प्रस्तावित अधिग्रहण का विरोध करने का व्यावहारिक रूप से कोई साधन नहीं था। विद्या देवी बनाम एच. पी. 14 राज्य मामले में दो न्यायाधीशों की पीठ ने जे. इंदु मल्होत्रा के माध्यम से बोलते हुए निम्नलिखित महत्वपूर्ण टिप्पणी की:

“ 12.2.संविधान (44 वां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा संपत्ति का अधिकार एक मौलिक अधिकार नहीं रह गया, हालाँकि, यह एक मानव अधिकार बना रहा (तुकाराम काना जोशी बनाम महाराष्ट्र औद्योगिक विकास निगम)।[तुकाराम काना जोशी बनाम महाराष्ट्र औद्योगिक विकास निगम], (2013) 1 एससीसी 353:(2013) 1 एस. सी. सी. (सी. आई. वी.) 491) एक कल्याणकारी राज्य में, और संविधान के अनुच्छेद 300-ए के अंतर्गत एक संवैधानिक अधिकार। अनुच्छेद 300-ए में प्रावधान है कि किसी भी व्यक्ति को विधि के अधिकार के अलावा उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा। विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार राज्य किसी नागरिक को उसकी संपत्ति से बेदखल नहीं कर सकता है। क्षतिपूर्ति का भुगतान करने की बाध्यता, हालाँकि अनुच्छेद 300-ए में स्पष्ट रूप से शामिल नहीं है, का अनुमान उस अनुच्छेद [के. टी. प्लांटेशन (पी) लिमिटेड बनाम. कर्नाटक राज्य [के. टी. प्लांटेशन (पी) लिमिटेड बनाम. कर्नाटक राज्य, (2011) 9 एससीसी 1:(2011) 4 एस. सी. सी. (सी. आई. वी.) 414]।

12.3. विधि की उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना किसी व्यक्ति को उसकी निजी संपत्ति से जबरन बेदखल करना मानव अधिकार के साथ-साथ संविधान के अनुच्छेद 300-ए के अंतर्गत संवैधानिक अधिकार का भी उल्लंघन होगा। "17. इसलिए, प्रक्रियात्मक आवश्यकताओं का पालन करने के महत्व को कम नहीं किया जा सकता है।

iii) 1959 के अधिनियम की धारा **52** के अंतर्गत प्रक्रियात्मक आवश्यकताओं को पूरा करने का बोझ प्राधिकरण पर है।

14 (2020) 2 एससीसी 569 535

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एल.आर.एस। [ऋषिकेश राय, जे.] 536

18. वर्तमान मामले के तथ्यों पर लौटते हुए, आइए अब 1959 के अधिनियम की धारा 52 के निहितार्थ पर विचार करें। इस चर्चा में निहित प्रावधान नीचे दिया गया है:

“52. भूमि का अनिवार्य अधिग्रहण -

(1) जहां न्यास से किसी अभ्यावेदन पर राज्य सरकार को यह प्रतीत होता है कि इस अधिनियम के अंतर्गत सुधार के उद्देश्य से या किसी अन्य उद्देश्य के लिए किसी भूमि की आवश्यकता है, राज्य सरकार आधिकारिक राजपत्र में एक सूचना प्रकाशित करके ऐसी भूमि का अधिग्रहण कर सकती है जिसमें उस विशेष उद्देश्य को निर्दिष्ट किया गया है जिसके लिए भूमि की आवश्यकता है और यह कहा गया है कि राज्य सरकार ने इस धारा के अनुसरण में भूमि का अधिग्रहण करने का निर्णय लिया है।

(2) उप-धारा (1) के अंतर्गत एक सूचना प्रकाशित करने से पहले, राज्य सरकार एक अन्य सूचना द्वारा भूमि के मालिक और किसी अन्य व्यक्ति से, जो राज्य सरकार की राय में इसमें

रुचि रखता है, ऐसे समय के भीतर, जो सूचना में निर्दिष्ट किया जाए, कारण बताएगी कि भूमि का अधिग्रहण क्यों नहीं किया जाना चाहिए।

(3) भूमि के स्वामी और उसमें रुचि रखने वाले किसी अन्य व्यक्ति द्वारा दिखाए गए कारण, यदि कोई हो, पर विचार करने के बाद और ऐसे मालिक और व्यक्ति को सुनवाई का अवसर देने के बाद, राज्य सरकार ऐसे आदेश पारित कर सकती है जो वह मानती है।

(4) जब उप-धारा (1) के अंतर्गत एक सूचना आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशित की जाती है, तो भूमि ऐसे प्रकाशन की तारीख को और उसके बाद से राज्य सरकार के पास सभी बोझों से पूरी तरह से निशुल्क होगी। (5) जहां कोई भूमि उप-धारा (4) के अंतर्गत राज्य सरकार में निहित है, वहां राज्य सरकार लिखित सूचना द्वारा किसी भी व्यक्ति को, जो भूमि के कब्जे में हो सकता है, राज्य सरकार या उसके द्वारा विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति को नोटिस की सेवा के तीस दिनों के भीतर आत्मसमर्पण करने या उसका कब्जा सौंपने का आदेश दे सकती है।

19. 1959 के अधिनियम की धारा 52 का निहितार्थ यह है कि नोटिस न केवल मालिक को बल्कि "किसी अन्य इच्छुक व्यक्ति" को भी दिया जाना आवश्यक है, जिससे संबंधित भूमि में रुचि रखने वाले सभी लोगों को शामिल किया जा सके। इस धारा की कठोरता से बचने के लिए, अपीलार्थी-न्यास ने अपने

/

[2023] 14 एस सी आर।

यह कहते हुए कि वादी, गोरधन दास को जानबूझकर मुआवजा नहीं मिला था ताकि इसे बाद में एक आधार बनाया जा सके और जैसा कि निचली न्यायालय ने पाया, इसकी जिम्मेदारी वादी पर होगी। गोरधन दास निर्विवाद रूप से वास्तविक मालिक थे और इसलिए, विधि के अधिदेश के अनुसार, यह संबंधित प्राधिकरण की जिम्मेदारी थी कि वह भूमि मालिक या इच्छुक व्यक्तियों को उनकी संपत्ति से वंचित करने से पहले उचित वैधानिक प्रक्रिया का पालन करे। किसी भी निजी संपत्ति का अधिग्रहण करने से पहले उच्च प्रक्रियात्मक सीमा को पूरा करने का भार प्रतिवादी संख्या 1 यानी अर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट पर है। इसके अलावा, प्रतिवादी नं। 1 यह इंगित करने के लिए कोई सबूत पेश करने में भी असमर्थ था कि क्या मूल खतेदार को कभी मुआवजा दिया गया था जैसा कि उनके द्वारा अस्पष्ट रूप से दावा किया गया था। इस तथ्य को प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा निर्णय के पैरा 20 में भी नोट किया गया था कि, एक अस्पष्ट विवाद के बावजूद, मूल खतेदारों को भी मुआवजे के भुगतान का कोई प्रमाण नहीं है। दूसरी ओर, वादी ने एक पत्र प्रस्तुत किया है जिसमें मूल खतेदार 10.1.1990 पर मुआवजे की मांग कर रहा है। जो भी हो, न तो वास्तविक मालिकों को नोटिस जारी किया गया था और न ही प्रतिवादी सं. द्वारा उन्हें कोई मुआवजा

दिया गया था। 11. जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है, 1959 के अधिनियम की धारा 52 के तहत सरकार को भूमि के मालिक और किसी अन्य व्यक्ति को नोटिस जारी करने की आवश्यकता है, जो अधिग्रहण से अपनी भूमि की सुरक्षा की मांग करने के लिए उसमें रुचि रखता है। नोटिस के जवाब पर विचार करने के बाद ही संबंधित भूमि राज्य सरकार को सौंपी जाएगी। भूमि मालिक या इच्छुक व्यक्तियों को भी सुनवाई का अवसर दिया जाना आवश्यक है। वर्तमान मामले में न तो कोई नोटिस जारी किया गया और न ही भूमि मालिक को कोई मुआवजा दिया गया। इसके अलावा, यह आरोप लगाया गया है कि 1972 में भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू होने के बाद भी, वादी दीवानी मुकदमे के लंबित रहने के दौरान 10.6.1998 तक कब्जे का आनंद लेता रहा। वादी को किसी अन्य भूमि से संबंधित निर्णय की आड़ अंतर्गत जबरन बेदखल कर दिया गया था। उक्त निर्णय का उत्तरदाताओं की भूमि से कोई लेना-देना नहीं है। यह पूरी भूमि अधिग्रहण प्रक्रिया में स्पष्ट प्रक्रियात्मक अनियमितताओं की ओर इशारा करता है।

15 डी. बी. बासनेट बनाम कलेक्टर, पूर्वी जिला, गंगटोक, सिक्किम (2020) 4 एस. सी. सी. 572; जगन सिंह एंड कंपनी बनाम लुधियाना इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट 2022 एससीसीऑनलाइन 1144 537

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [ऋषिकेश राय, जे.] 538

20. एम. पी. हाउसिंग बोर्ड बनाम मोहम्मद में टिप्पणियाँ। शफी 16 हैं

इस संदर्भ में प्रासंगिक जहां उचित सूचना देने के महत्वपूर्ण सिद्धांत को निम्नानुसार नोट किया गया था:

“8.....अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत अधिसूचना जारी करने का उद्देश्य दो गुना है। सबसे पहले, यह सरकार द्वारा एक सार्वजनिक घोषणा है और कलेक्टर द्वारा इस अधिनियम के लिए एक सार्वजनिक सूचना है कि भूमि, जैसा कि उसमें निर्दिष्ट किया गया है, उसमें उल्लिखित "सार्वजनिक उद्देश्य" के लिए सरकार द्वारा आवश्यक है या इसकी आवश्यकता होने की संभावना है; और दूसरा, यह स्थानीय प्राधिकरण के विभागीय अधिकारियों या अधिकारियों को ऐसे सभी कार्यों को करने के लिए अधिकृत करता है जो अधिनियम की धारा 4 (2) में उल्लिखित हैं। अधिसूचना को इलाके में प्रकाशित किया जाना चाहिए और विशेष रूप से प्रस्ताव से प्रभावित होने की संभावना वाले व्यक्तियों को ध्यान में रखा जाना चाहिए कि ऐसी गतिविधि चल रही है। इस प्रकार, अधिसूचना में न केवल उस "सार्वजनिक उद्देश्य" के बारे में पर्याप्त स्पष्टता देने की आवश्यकता है, जिसके लिए अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू की जा रही है, बल्कि उस "क्षेत्र" के बारे में भी जहां भूमि स्थित है, अधिग्रहण की जाने वाली प्रस्तावित भूमि के बारे में यथासंभव पूर्ण विवरण के साथ, ताकि "इच्छुक" व्यक्तियों को यह पता चल सके कि किस भूमि का अधिग्रहण किया जा रहा है और किस उद्देश्य के लिए किया जा रहा है और अधिनियम के अंतर्गत आगे की कार्रवाई

के लिए वे अपनी आपत्तियों आदि के आधार पर आगे बढ़ सकें, क्योंकि ऐसे व्यक्तियों के लिए यह खुला है कि वे अधिग्रहण के लिए भूमि की अनुपयुक्तता का प्रचार करें।

कथित "सार्वजनिक उद्देश्य" भी। यदि अधिनियम की धारा 4 (1) के अंतर्गत कोई अधिसूचना दोषपूर्ण है और अधिनियम की आवश्यकताओं का पालन नहीं करती है, तो यह न केवल अधिसूचना को दूषित करती है, बल्कि अधिग्रहण से जुड़ी सभी बाद की कार्यवाही को भी खराब करती है। "

[जोर दिया गया] 21. यह ऊपर से तार्किक रूप से इस बात का अनुसरण करता है कि उचित सूचना देने जैसी निर्धारित वैधानिक प्रक्रिया का पालन किए बिना बेदखल करना न केवल अत्यधिक प्रतिकूल है, बल्कि यह संवैधानिक अधिकारों का भी उल्लंघन है और इस तरह भूमि अधिग्रहण की पूरी प्रक्रिया को दूषित कर देगा। विधि अच्छी तरह से तय है कि भूमि के अनिवार्य अधिग्रहण के लिए विधि में उल्लिखित अनिवार्य प्रक्रियात्मक आवश्यकताओं का सख्ती से पालन अनिवार्य है। कानूनी रूप से संचालित अधिग्रहण प्रक्रियाएं संबंधित प्राधिकरण द्वारा मनमाने ढंग से कार्रवाई की संभावना को कम करती हैं। इस प्रभाव की अंतिम सीमाएँ

16 (1992) 2 एससीसी 168

/

[2023] 14 एस सी आर।

इसलिए अपीलीय न्यायालय और उच्च न्यायालय हमारे अनुमोदन के योग्य होंगे। दूसरे शब्दों में, पूरे 3 बीघा भूमि के लिए भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही को शुरू से ही अमान्य माना जाता है।

22. जहाँ तक भोला शंकर बनाम जिला मामले में इस न्यायालय के निर्णय का संबंध है। भूमि अधिग्रहण कार्यालय धारा 17, जिस पर श्री अरुणेश्वर गुप्ता ने भरोसा किया, अपीलार्थी के विद्वान वकील का संबंध है, यह इस मामले के तथ्यों से अलग है। भोला शंकर (ऊपर) में, तथ्यात्मक मैट्रिक्स ऐसा था कि संबंधित भूखंड अधिसूचना के प्रकाशन के बाद खरीदा गया था।

भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 की धारा 4 के अंतर्गत। लेकिन वर्तमान में

मामला, वादी प्रतिवादी सं। 2 से 4 ने भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू होने से पहले ही भूमि खरीद ली थी। अतः प्रश्न (i) का उत्तर तदनुसार दिया जाता है।

ई. रखरखाव

i) सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 9 के अंतर्गत सिविल न्यायालयों का विस्तारित अधिकार क्षेत्र।

23. किसी वाद की स्थिरता पर अपीलार्थी के तर्क के बगल में, यह कोई सुसंगतता नहीं है कि दीवानी न्यायालयों की अधिकारिता को हटाया नहीं जा सकता है।

निश्चित रूप से एक बात है। सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 9 अधिकार प्रदान करती है

अदालतें सभी दीवानी मुकदमों की सुनवाई करेंगी, जब तक कि वे प्रतिबंधित न हों। दीवानी न्यायालय के अधिकार क्षेत्र की रूपरेखा को धूलाबाई (ऊपर) में एक निर्णायक न्यायाधीश की संविधान पीठ द्वारा संक्षिप्त रूप से स्पष्ट किया गया है। मुख्य न्यायाधीश एम हिदायतुल्ला ने पीठ के लिए लिखते हुए दीवानी अदालतों के अधिकार क्षेत्र के बारे में परीक्षण निर्धारित किए। प्रासंगिक सिद्धांतों को नीचे निकाला गया है:

“(1) जहां कानून विशेष न्यायाधिकरणों के आदेशों को वैधता प्रदान करता है, वहां दीवानी अदालतों के अधिकार क्षेत्र को बाहर रखा जाना चाहिए यदि ऐसा करने के लिए पर्याप्त उपाय है जो दीवानी अदालतें सामान्य रूप से करती हैं।

एक सूट में। हालाँकि, इस तरह के प्रावधान उन मामलों को बाहर नहीं करते हैं जहाँ विशेष अधिनियम के प्रावधानों का पालन नहीं किया गया है या सांविधिक न्यायाधिकरण ने न्यायिक प्रक्रिया के मौलिक सिद्धांतों के अनुरूप कार्य नहीं किया है।

17 (1973) 2 एससीसी 59 539

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [ऋषिकेश रॉय, जे.]
540

(2) जहां न्यायालय की अधिकारिता की एक स्पष्ट बाधा है, वहां प्रदान किए गए उपचारों की पर्याप्तता या पर्याप्तता को सुनिश्चित करने के लिए विशेष अधिनियम की योजना की जांच प्रासंगिक हो सकती है, लेकिन दीवानी न्यायालय की अधिकारिता को बनाए रखने के लिए निर्णायक नहीं है।

जहां कोई स्पष्ट बहिष्कार नहीं है, वहां उपचारों की जांच और इरादे को पूरा करने के लिए विशेष अधिनियम की योजना आवश्यक हो जाती है और जांच का परिणाम निर्णायक हो सकता है। बाद के मामले में यह देखना आवश्यक है कि क्या कानून एक विशेष अधिकार या दायित्व पैदा करता है और अधिकार या दायित्व के निर्धारण के लिए प्रावधान करता है और आगे यह निर्धारित करता है कि उक्त अधिकार और दायित्व के बारे में सभी प्रश्न इस प्रकार गठित न्यायाधिकरणों द्वारा निर्धारित किए जाएंगे, और क्या सिविल अदालतों में कार्यों से जुड़े उपचार आमतौर पर उक्त कानून द्वारा निर्धारित किए जाते हैं या नहीं।

(7) दीवानी न्यायालय की अधिकारिता के बहिष्करण का आसानी से अनुमान नहीं लगाया जा सकता है जब तक कि उपरोक्त शर्तें लागू नहीं होती हैं। "

[जोर दिया गया]

24. रमेश गोबिंदराम बनाम सुग्रा हुमायूं मिर्जा 18 में, एक दो-न्यायाधीश

इस न्यायालय की पीठ ने कहा कि दीवानी प्रकृति के मुकदमों की सुनवाई करने के लिए दीवानी अदालतों का अधिकार क्षेत्र व्यापक है और अधिकार क्षेत्र के निष्कासन को साबित करने की जिम्मेदारी उस पक्ष पर है जो इसका दावा करता है। न्यायालय ने कहा कि उन मामलों में भी जहां दीवानी न्यायालय की अधिकारिता एक क़ानून द्वारा वर्जित है, परीक्षण यह निर्धारित करने के लिए है कि क्या क़ानून के अंतर्गत गठित प्राधिकरण या न्यायाधिकरण के पास राहत देने की शक्ति है जो दीवानी न्यायालय ें आम तौर पर उनके समक्ष दायर मुकदमों में देती हैं। प्रासंगिक टिप्पणियों को नीचे निकाला गया है:

“12. इस संबंध में अच्छी तरह से स्थापित नियम यह है कि दीवानी अदालतों को उन मनोरंजन को छोड़कर नागरिक प्रकृति के सभी मुकदमों की सुनवाई करने का अधिकार क्षेत्र है, जिनमें स्पष्ट रूप से या निहित रूप से प्रतिबंध है। दीवानी प्रकृति के मुकदमों की सुनवाई के लिए दीवानी अदालतों का अधिकार क्षेत्र बहुत व्यापक है। कोई भी क़ानून जो ऐसी अधिकारिता को बाहर करता है, इसलिए, सामान्य नियम का एक अपवाद है कि सभी विवाद एक दीवानी न्यायालय द्वारा विचारण योग्य होंगे। अदालतें इस तरह के किसी भी अपवाद का आसानी से अनुमान नहीं लगा सकती हैं। न्यायालय एक ऐसे निर्माण के पक्ष में होगा जो क्षेत्राधिकार के प्रतिधारण को बनाए रखेगा

/

[2023] 14 एस सी आर।

दीवानी अदालतें और सबूत की जिम्मेदारी उस पक्ष को सौंप दें जो दावा करता है कि दीवानी अदालत के अधिकार क्षेत्र को हटा दिया गया है। "

25. इस मामले में, धुलाबाई (उपरोक्त) में निर्धारित परीक्षण को लागू करते हुए, यह निर्धारित किया जाना चाहिए कि क्या अधिनियम उस तरह का पर्याप्त वित्तीय उपचार प्रदान करता है जैसा कि सिविल न्यायालय आम तौर पर किसी मुकदमे में देता है, जैसे कि सिविल न्यायालय की अधिकारिता का अनिवार्य रूप से अनुमान लगाया जाना चाहिए कि उसे हटा दिया गया है। उस उद्देश्य के लिए, किरायेदारी अधिनियम, 1955 की वैधानिक योजना की सावधानीपूर्वक जांच की जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त, धुलाबाई (उपरोक्त) द्वारा निर्धारित परीक्षण के अनुसार, उन मामलों में दीवानी न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को समाप्त नहीं किया जाएगा जहां न्यायिक प्रक्रिया के मौलिक सिद्धांतों और विशेष अधिनियम के प्रावधानों का पालन नहीं किया जाता है।

26. धुलाबाई (ऊपर) में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि की उपरोक्त समझ के साथ आगे बढ़ते हुए, आइए अब हम यह निर्धारित करने के लिए किरायेदारी अधिनियम, 1955 की योजना की जांच करें कि क्या मुकदमे में दावा की गई राहत 1955 के अधिनियम के दायरे के भीतर या बाहर थी। किरायेदारी अधिनियम की प्रस्तावना,

1955 यह "कृषि भूमि के किरायेदारी से संबंधित विधि को समेकित और संशोधित करने और भूमि सुधारों के कुछ उपायों और उससे जुड़े मामलों के लिए प्रावधान करने" के लिए एक अधिनियम है। की वैधानिक योजना

अधिनियम कृषि भूमि के किरायेदारी का प्रावधान करता है। अधिनियम के भाग I में निहित धारा 1 संक्षिप्त शीर्षक और प्रारंभ से संबंधित है। धारा 5 परिभाषाओं से संबंधित है। महत्वपूर्ण रूप से, धारा 5 (35) राजस्व की अवज्ञा प्रदान करती है।

न्यायालय "एक न्यायालय या एक अधिकारी के रूप में जिसका अधिकार क्षेत्र कृषि किरायेदारी, प्रोफिट्स और भूमि या भूमि में किसी अन्य अधिकार या हित से संबंधित अन्य मामलों से संबंधित मुकदमों या अन्य कार्यवाहियों पर विचार करने के लिए है, जिसमें ऐसे न्यायालय या अधिकारी को न्यायिक रूप से कार्य करने की आवश्यकता होती है।" धारा 5 (43) में प्रावधान है -

किरायेदार की अवज्ञा। अध्याय III किरायेदार के वर्गों से संबंधित है जबकि अध्याय IV हस्तांतरण, हस्तांतरण, विनियम और किरायेदारों के विभाजन के बारे में है। अध्याय 5 का संबंध समर्पण, त्याग और किरायेदारों के विलुप्त होने से है। अन्य अध्यायों पर एक सरसरी नज़र डालने से यह भी पता चलेगा कि वे कृषि किरायेदारों से संबंधित हैं जिनका मुकदमे में दावा किए गए स्थायी निषेधाज्ञा की राहत से कोई लेना-देना नहीं है। शीर्षक, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, विवादित नहीं है। किरायेदारी अधिनियम, 1955 की धारा 207 और 208 जो वर्तमान मुद्दे के लिए केंद्रीय है, निम्नानुसार है:

"207. केवल राजस्व न्यायालय द्वारा संज्ञेय वाद और आवेदन-(1)

तीसरी अनुसूची में निर्दिष्ट प्रकृति के सभी मुकदमों और आवेदन की सुनवाई और निर्धारण राजस्व न्यायालय द्वारा किया जाएगा।

541

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [ऋषिकेश रॉय, जे.]
542

(2) राजस्व न्यायालय के अलावा कोई अन्य न्यायालय ऐसे किसी वाद या आवेदन या कार्रवाई के कारण के आधार पर किसी वाद या आवेदन का संज्ञान नहीं लेगा, जिसके संबंध में ऐसे किसी भी दावेदार आवेदन के माध्यम से कोई राहत प्राप्त की जा सकती है।

स्पष्टीकरण-यदि कार्रवाई का कारण वह है जिसके संबंध में राजस्व न्यायालय द्वारा राहत दी जा सकती है, तो यह मायने नहीं रखता कि दीवानी न्यायालय से मांगी गई राहत राजस्व न्यायालय द्वारा दी जा सकने वाली राहत से अधिक या उससे अधिक है या उसके समान नहीं है।

208. सिविल प्रक्रिया संहिता का अनुप्रयोग-के प्रावधान

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का केंद्रीय अधिनियम 5), सिवाय: (क) जहाँ तक विसंगति फैली हुई है, इस अधिनियम में किसी भी चीज़ के साथ असंगत प्रावधान।

(ख) इस अधिनियम के दायरे से बाहर केवल विशेष मुकदमों या कार्यवाहियों पर लागू होने वाले प्रावधान, और

(ग) चौथी अनुसूची की सूची I में निहित प्रावधान, चौथी अनुसूची की सूची II में निहित संशोधनों के अधीन रहते हुए, इस अधिनियम के अंतर्गत सभी वाद और कार्यवाहियों पर लागू होंगे। "

27. आइए अब हम किरायेदारी अधिनियम, 1955 की समग्र योजना के संदर्भ में मुकदमे में दावा की गई राहत को देखें। मुकदमे में, वादी ने, अन्य बातों के साथ-साथ, दो पंजीकृत बिक्री विलेखों के माध्यम से खरीदी गई 3 बीघा भूमि के स्वामित्व और कब्जे को बाधित करने से स्थायी निषेधाज्ञा की मांग की। इस तरह की राहत संभवतः किरायेदारी अधिनियम, 1955 के अंतर्गत सशक्त मंचों द्वारा नहीं दी जा सकती, जो मुख्य रूप से किरायेदारी अधिकारों और उनके संरक्षण से संबंधित है। इसलिए, दीवानी न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को समाप्त नहीं किया जाता है

किरायेदारी अधिनियम, 1955 की धारा 207 या धारा 208 द्वारा और इसके विपरीत अपीलार्थी द्वारा की गई प्रस्तुति को अस्वीकार किया जाना चाहिए। इसलिए, अधिनियम की योजना का मूल्यांकन हमें इस निष्कर्ष पर ले जाएगा कि वादी द्वारा दावा की गई राहतों को देखते हुए राजस्व न्यायालय का अधिकार क्षेत्र किरायेदारी अधिनियम, 1955 के अंतर्गत वर्जित होगा।

28. इसके अलावा, जहां कोई क़ानून प्रक्रिया को वास्तविकता देता है, वहां भी यह ऐसे मामलों को बाहर नहीं करता है जहां विशेष क़ानून के प्रावधानों का पालन नहीं किया गया है या न्यायाधिकरण इसके अनुरूप निर्णय लेने में विफल रहा है।

/

[2023] 14 एस सी आर।

न्यायिक प्रक्रिया के मूल सिद्धांत 19. वर्तमान मामले में, 1959 अधिनियम की धारा 52 के अंतर्गत वास्तविक मालिक को नोटिस के अभाव में, अधिग्रहण की कार्यवाही कानूनी रूप

से दूषित है और इसलिए संबद्ध मालिक को दीवानी न्यायालय से राहत लेने का अधिकार होना चाहिए। जैसा कि देखा गया है, प्रतिवादी नं। 1 अर्थात्, अर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट 1959 अधिनियम की धारा 52 के अंतर्गत आवश्यक आवश्यकताओं का पालन करने में विफल रहा। जब मौलिक न्यायिक प्रक्रिया की अवहेलना की जाती है, तो दी गई कार्रवाई कानूनी रूप से अमान्य होती है और इसे "अधिनियम के बाहर" के रूप में देखा जाना चाहिए। टिप्पणियों में

फर्म सेठ राधा किशन बनाम प्रशासक, नगरपालिका समिति 20

इसलिए इस संदर्भ में लागू होना चाहिए: "7. सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 9 के तहत न्यायालय को उन मुकदमों को छोड़कर सिविल प्रकृति के सभी मुकदमों की सुनवाई करने का अधिकार क्षेत्र होगा, जिन अंतर्गत संज्ञान या तो स्पष्ट रूप से या निहित रूप से वर्जित है। इसलिए, एक क़ानून, स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ से, किसी विशेष मामले के संबंध में दीवानी न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र को बाधित कर सकता है। उक्त मामले के संबंध में किसी न्यायाधिकरण को केवल विशेष अधिकारिता प्रदान करना अपने आप में दीवानी अदालतों के अधिकार क्षेत्र को बाहर नहीं करता है। क़ानून सिविल न्यायालयों की अधिकारिता को हटाने के लिए विशिष्ट रूप से प्रावधान कर सकता है; भले ही ऐसा कोई विशिष्ट बहिष्करण न हो, यदि यह एक दायित्व पैदा करता है जो पहले मौजूद नहीं है और पीड़ित पक्ष के लिए एक विशेष और विशेष उपाय देता है, तो इसके द्वारा प्रदान किए गए उपाय का पालन किया जाना चाहिए। यही सिद्धांत लागू होगा यदि क़ानून ने उस विशेष मंच के लिए प्रावधान किया था जिसमें उपचार किया जा सकता था। ऐसे मामलों में भी दीवानी अदालत का अधिकार क्षेत्र पूरी तरह से समाप्त नहीं होता है। दीवानी न्यायालय में एक मुकदमा हमेशा एक क़ानून द्वारा बनाए गए न्यायाधिकरण के आदेश पर प्रश्न उठाने के लिए होगा, भले ही उसका आदेश, स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ से, शून्य बना दिया गया हो, अगर उक्त न्यायाधिकरण अपनी शक्ति का दुरुपयोग करता है या अधिनियम के अंतर्गत कार्य नहीं करता है, लेकिन इसके प्रावधानों का उल्लंघन करता है।" 29. वर्तमान मामले के तथ्यों के लिए धुलाबाई (ऊपर) और फर्म सेठ राधा कृष्णन (ऊपर) में निर्धारित सिद्धांतों को लागू करते हुए, यह अभिनिर्धारित करने में कोई दुविधा नहीं हो सकती है कि इस प्रकृति का मुकदमा दीवानी न्यायालय के समक्ष बनाए रखा जा सकता है, विशेष रूप से मुकदमे में मांगी गई राहत की प्रकृति को देखते हुए।

19 देवाजी बनाम गणपतलाल, ए. आई. आर. 1969 एस. सी. 560; श्री कंड्रेगुला श्रीनिवास जगन्नाथ राव पंतुलु बहादुर गारू बनाम ए. पी. राज्य, (1969) 3 एस. सी. सी 71

20 (1964) 2 एससीआर 273 543

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [ऋषिकेश राय, जे.]
544

(ii) वादी का पद एक बादल के अंतर्गत नहीं है।

30. अगला मुद्दा यह है कि क्या स्थायी निषेधाज्ञा के लिए दीवानी मुकदमा बिना घोषणा के चलाया जा सकता है। इस पर, यह तय किया जाता है कि जहां वादी का अधिकार विवाद में नहीं है या एक बादल के अंतर्गत नहीं है, तो कब्जे पर अधिकार के संदर्भ में निषेधाज्ञा के लिए एक मुकदमे का फैसला किया जा सकता है। प्रासंगिक परीक्षण किए गए थे

अनाथुला सुधाकर बनाम पी. बुची रेड्डी 21:

“ 13.1. जहां कोई वादी किसी संपत्ति के वैध या शांतिपूर्ण कब्जे में है और इस तरह के कब्जे में प्रतिवादी द्वारा हस्तक्षेप किया जाता है या धमकी दी जाती है, एक निषेधाज्ञा सरलीकरण के लिए मुकदमा होगा। एक व्यक्ति को किसी भी व्यक्ति के खिलाफ अपने कब्जे की रक्षा करने का अधिकार है जो निषेधात्मक निषेधाज्ञा की मांग करके एक बेहतर शीर्षक साबित नहीं करता है। लेकिन गलत कब्जे वाला व्यक्ति सही मालिक के खिलाफ निषेधाज्ञा का हकदार नहीं है। 13.2. जहां वादी का अधिकार विवादित नहीं है, लेकिन उसके कब्जे में नहीं है, उसका उपाय कब्जे के लिए एक मुकदमा दायर करना और यदि आवश्यक हो, तो इसके अलावा एक निषेधाज्ञा की मांग करना है। कब्जे से बाहर कोई व्यक्ति, कब्जे की राहत का दावा किए बिना, निषेधाज्ञा की राहत नहीं ले सकता है।

13.3. जहां वादी के कब्जे में है, लेकिन संपत्ति पर उसका अधिकार विवाद में है, या एक बादल के अंतर्गत है, या जहां प्रतिवादी उस पर अधिकार का दावा करता है और प्रतिवादी से बेदखल होने का खतरा भी है, तो वादी को अधिकार की घोषणा और निषेधाज्ञा की परिणामी राहत के लिए मुकदमा करना होगा। जहां वादी का अधिकार संदेह के घेरे अंतर्गत है या विवाद अंतर्गत है और वह कब्जे अंतर्गत नहीं है या कब्जा स्थापित करने अंतर्गत सक्षम नहीं है, अनिवार्य रूप से वादी को घोषणा, कब्जे और निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा दायर करना होगा। ”

31. पुनरावृत्ति की कीमत पर, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि मुकदमे में लिखित बयान में, प्रतिवादी नं० 1 मान लिया कि वादी ने प्रतिवादी संख्या के साथ मिलकर 2 4 ने क्रमशः दिनांक 1 और 2 के दो बिक्री विलेखों के माध्यम से कुल 3 बीघा भूमि खरीदी और यह भी स्वीकार किया गया कि वादी ने जिला मजिस्ट्रेट के समक्ष एक बीघा भूमि को गैर-कृषि श्रेणी में बदलने के लिए एक आवेदन प्रस्तुत किया, जिस पर जिला मजिस्ट्रेट ने एनओसी जारी किया क्योंकि उक्त भूमि की आवश्यकता थी।

21 (2008) 4 एस. सी. सी. 594

/

[2023] 14 एस सी आर।

पेट्रोल पंप स्थापित करना। यहाँ, वादी के लिए शीर्षक प्रतिवादियों द्वारा विवादित नहीं है और यह एक बादल के अंतर्गत नहीं है। इसलिए मुकदमे में मालिकाना हक का प्रश्न कोई मुद्दा

नहीं है। इसके अलावा, अधिसूचना जारी करने से पहले 1959 के अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत अनिवार्य आवश्यकताओं का पालन नहीं किया गया था, जिसके बिना शीर्षक को विवादित नहीं कहा जा सकता है। इसलिए खिताब के लिए प्रतिस्पर्धा के अभाव में निषेधाज्ञा के लिए ऐसा मुकदमा कायम रखा जा सकता है।

32. बिहार राज्य बनाम धीरेन्द्र कुमार 22, लक्ष्मी चंद बनाम ग्राम पंचायत करारिया 23, आयुक्त, बेंगलोर विकास प्राधिकरण और एक अन्य बनाम बृजेश रेड्डी और अन्य 24 में, यह माना गया कि

अधिग्रहण अधिसूचना पर सिविल न्यायालय में सवाल नहीं उठाया जा सकता है और इसे केवल उच्च न्यायालय में इसके रिट अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत चुनौती दी जा सकती है। क्या ये अनुपात वर्तमान मामले में लागू होंगे, यह एक ऐसा प्रश्न है जिसे संबोधित करने की आवश्यकता है। यह अपीलार्थी अर्थात् शहरी सुधार न्यास का मामला है कि 1959 के अधिनियम के अंतर्गत अधिग्रहित भूमि की प्रकृति 'कृषि भूमि' थी जिसे भूमि राजस्व अधिनियम, 1956 की धारा 90-ए के अंतर्गत 'गैर-कृषि उपयोग' के लिए परिवर्तित कर दिया गया था। किरायेदारी अधिनियम, 1955 की धारा 207 के अनुसार, जिसे प्रविष्टि 8 ए और तीसरी अनुसूची की प्रविष्टि 23 सी के साथ पढ़ा जाता है, कृषि भूमि से संबंधित मामले की सुनवाई और निर्धारण केवल राजस्व न्यायालय द्वारा किया जा सकता है। चूंकि किरायेदारी अधिनियम, 1955 की योजना की पहले जांच की गई थी, इसलिए यह स्पष्ट है कि मुकदमे में की गई प्रार्थनाएं 1955 के अधिनियम के दायरे से बाहर हैं। इसके अलावा, मुकदमे में अधिसूचना को रद्द करने के लिए राहत भी नहीं मांगी गई थी। इसके अलावा, यह अपीलार्थी का मामला नहीं है कि रिट अदालत राहत के लिए कानूनी विकल्प है, लेकिन वे चाहते हैं कि भूमि मालिकों को 1955 के अधिनियम के अंतर्गत राजस्व अदालत में भेज दिया जाए। यह पहले से ही देखा जा चुका है कि राजस्व न्यायालय उत्तरदाताओं द्वारा दावा की गई राहत के लिए उपयुक्त मंच क्यों नहीं है। यहाँ के तथ्य स्पष्ट रूप से अलग हैं और इसलिए, धीरेन्द्र कुमार (उपरोक्त) में निर्धारित अनुपात का यहाँ कोई उपयोग नहीं हो सकता है। इसके अलावा, धूलाबाई (उपरोक्त) में पांचवें न्यायाधीश की पीठ के निर्णय के अनुसार, एक अपवाद बनाया गया है जिसके अनुसार यदि न्यायिक प्रक्रिया के मौलिक सिद्धांतों का उल्लंघन होता है और किसी विशेष अधिनियम के प्रावधानों का पालन नहीं किया जाता है, तो एक दीवानी मुकदमा कायम रखा जा सकता है।

22 (1995) 4 एससीसी 229 23 (1996) 7 एससीसी 218 24 (2013) 3 एससीसी 66 545

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [ऋषिकेश रॉय, जे.]
546

iii) राज्य के गैर-कार्यान्वयन को रखरखाव के लिए घातक नहीं माना जा सकता है।

33. अपीलार्थी द्वारा यह भी अनुरोध किया गया था कि काफी देरी के कारण मुकदमा विचारणीय नहीं था और क्योंकि राज्य को मुकदमे की कार्यवाही में एक पक्ष प्रतिवादी के रूप में शामिल नहीं किया गया था। विचार करने पर इस तरह के विवाद को केवल खारिज किया जाना चाहिए। आवश्यक और उचित पक्षों से संबंधित कानूनी स्थिति का सारांश मुंबई इंटरनेशनल में दिया गया था।

एयरपोर्ट प्राइवेट लिमिटेड बनाम रीजेंसी कन्वेंशन सेंटर और होटल प्राइवेट

निम्नानुसार सीमित 25: “15. एक "आवश्यक पक्ष" एक ऐसा व्यक्ति है जिसे एक पक्ष के रूप में शामिल किया जाना चाहिए था और जिसकी अनुपस्थिति में न्यायालय द्वारा कोई प्रभावी डिक्री पारित नहीं की जा सकती थी। यदि किसी "आवश्यक पक्ष" को शामिल नहीं किया जाता है, तो मुकदमा ही खारिज होने योग्य है। एक "उचित पक्षकार" एक ऐसा पक्षकार होता है जो, हालांकि एक आवश्यक पक्षकार नहीं होता है, एक ऐसा व्यक्ति होता है जिसकी उपस्थिति न्यायालय को मुकदमे में विवाद के सभी मामलों पर पूरी तरह से, प्रभावी रूप से और पर्याप्त रूप से निर्णय लेने में सक्षम बनाएगी, हालांकि उसे उस व्यक्ति के पक्ष में या उसके खिलाफ होने की आवश्यकता नहीं है जिसके खिलाफ डिक्री दी जानी है। यदि कोई व्यक्ति उचित या आवश्यक पक्षकार नहीं पाया जाता है, तो न्यायालय के पास वादी की इच्छा के विरुद्ध उसे आरोपित करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। यह तथ्य कि वादी के खिलाफ मुकदमे का फैसला होने के बाद किसी व्यक्ति को मुकदमे की संपत्ति में अधिकार/ब्याज प्राप्त होने की संभावना है, ऐसे व्यक्ति को विशिष्ट ग प्रदर्शन के लिए मुकदमे में एक आवश्यक पक्ष या उचित पक्ष नहीं बनाएगा। ”

34. यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि अर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर राज्य का एक साधन है और मुकदमे में एक प्रतिस्पर्धी पक्ष था क्योंकि यह अधिग्रहण प्रक्रिया का लाभार्थी था। नागपुर सुधार न्यास बनाम विट्ठल राव 26 में इस न्यायालय की सात न्यायाधीशों की पीठ की टिप्पणी इस संदर्भ में प्रासंगिक होगी, जहां यह उल्लेख किया गया था कि

“ अधिग्रहण न्यास के लिए है और उसके कहने पर हो सकता है, लेकिन फिर भी अधिग्रहण सरकार द्वारा किया जाता है। अलग-अलग दौर की पृष्ठभूमि में

विभिन्न भूमि अधिग्रहण अधिनियमों के अंतर्गत क्षतिपूर्ति, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जहां तक मालिक का संबंध है, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि भूमि का अधिग्रहण सुधार न्यास, नगर निगम या सरकार द्वारा किया गया था। तथ्यों में

25 (2010) 7 एससीसी 417 26 (1973) 1 एससीसी 500

/

[2023] 14 एस सी आर।

वर्तमान मामले में, राज्य के गैर-कार्यान्वयन को मुकदमे की स्थिरता के लिए घातक नहीं माना जा सकता है क्योंकि प्रतिद्वंद्वी प्रतिवादी यानी शहरी सुधार न्यास राज्य का एक साधन है और अधिग्रहण प्रक्रिया का लाभार्थी है। इस बिंदु पर, हम उपयोगी रूप से राजस्थान उच्च न्यायालय के अर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट बनाम श्री पद्मानंद 27 के निष्कर्ष का भी उल्लेख कर सकते हैं, जिसमें अधिनियम 1959 के प्रावधानों का विश्लेषण करने के बाद, इसे निम्नानुसार नोट किया गया था:

“15.....हमारे विचार में, 1959 के अधिनियम के प्रावधानों की बारीकी से जांच करने पर इसमें कोई संदेह नहीं है कि उपरोक्त अधिनियम के अंतर्गत बनाया गया सुधार न्यास राज्य सरकार के एक प्रतिनिधि या साधन के रूप में काम करता है और इस तरह न्यास को 1953 के अधिनियम की धारा 18 के प्रयोजनों के लिए 'राज्य सरकार विभाग' माना जाना चाहिए।...

35. उपरोक्त अवलोकन के आलोक में, क्या यह संभवतः कहा जा सकता है कि वर्तमान उद्देश्य के लिए अर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, राजस्थान राज्य के संबंध में पूरी तरह से एक अलग इकाई है, जिसकी भागीदारी के बिना, मुकदमे में कोई आधिकारिक घोषणा संभवतः नहीं की जा सकती थी? इसका जवाब नकारात्मक होना चाहिए। श्री सौरव जैन बनाम मेसर्स एबीपी डिजाइन और अन्य 28 का अनुपात भी यहां लागू नहीं होगा। उस मामले में, सिविल न्यायाधीश के न्यायालय में प्रथम प्रतिवादी द्वारा एक मुकदमा दायर किया गया था, जिसने भूमि के एक निश्चित टुकड़े का "हस्तांतरणीय मालिक और कृषक" होने का दावा किया था। यह न्यायालय, उक्त मामले में, अन्य बातों के साथ-साथ, इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि प्रत्यर्थी को भूमि का अमान्य हस्तांतरण किया गया था और यह अमान्य था

शहरी अधिकतम सीमा अधिनियम, 1976 की धारा 5 (3) का उल्लंघन करना। स्पष्ट रूप से, न तो राज्य और न ही शहरी भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम 1976 के अंतर्गत किसी प्राधिकरण को उस मुकदमे में शामिल किया गया था। न्यायालय ने विशेष रूप से नोट किया कि मुकदमे का वास्तविक उद्देश्य वादी के पक्ष में बिक्री के लिए कथित अनुमति के आधार पर उसके अधिकार को लागू करना था। यह उस संदर्भ में था कि न्यायालय ने नोट किया कि प्रथम प्रतिवादी ने शीर्षक की घोषणा के लिए इंजीनियर ड्राफ्टिंग का सहारा लिया। हालांकि, वर्तमान मामले में, शीर्षक निर्विवाद है और आवश्यक चुनाव लड़ने वाले पक्ष यानी ट्रस्ट को एक पक्ष के रूप में रखा गया था। वर्तमान मामले में उस मामले की कोई प्रासंगिकता नहीं होने के लिए ये प्रमुख विशिष्टताएं हैं।

27 आकाशवाणी 1980 राज 176

28 2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 552 547

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [ऋषिकेश रॉय, जे.]
548

36. इस बिंदु पर, आइए अब हम इस न्यायालय की टिप्पणियों का उल्लेख करें

शहरी सुधार न्यास बनाम मोहन लाल 29 जो तथ्यों के करीब हैं।

वर्तमान मामले में। इस न्यायालय ने झूठे, तुच्छ, परेशान करने वाले और तकनीकी आधारों पर उनके खिलाफ आने वाले सभी आदेशों के खिलाफ राज्य की प्रवृत्ति और भाषाई अपीलों के उसके साधनों की निंदा की। उस मामले में तथ्य यह थे कि अर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर ने बिना किसी सूचना, अधिग्रहण या सहमति के भूमि मालिक के आवंटित भूखंड को अपने हाथ में ले लिया और उसके बाद, जब राष्ट्रीय आयोग द्वारा भूमि मालिकों को राहत दी गई, तो कार्रवाई के कारण के दो साल के भीतर विरोध और शिकायत के अभाव के लिए तकनीकी आधार पर इसे चुनौती दी गई। इसके अलावा, ट्रस्ट के वकील ने तर्क दिया कि भले ही यह एक अवैध अतिक्रमण था, उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अंतर्गत अधिकार क्षेत्र को लागू नहीं किया जा सकता है। ट्रस्ट के वकील की दलीलों को खारिज करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित प्रासंगिक टिप्पणियां कीं:

“5. यह चिंता का विषय है कि सरकारों और वैधानिक अधिकारियों द्वारा इस तरह के तुच्छ और अन्यायपूर्ण मुकदमे बढ़ रहे हैं। लोक हित में वैधानिक कार्यों के निर्वहन के लिए सांविधिक प्राधिकरण मौजूद हैं। उन्हें जिम्मेदार वादी होना चाहिए। वे तुच्छ और अन्यायपूर्ण आपत्तियां नहीं उठा सकते हैं, न ही कठोर और उग्र तरीके से काम कर सकते हैं। वे प्रोफी टीयरिंग उद्देश्यों के साथ कुछ निजी वादियों की तरह व्यवहार नहीं कर सकते हैं। न ही वे अन्यायपूर्ण संवर्धन का सहारा ले सकते हैं। उनसे अपेक्षा की जाती है कि जब उनके अधिकारी लापरवाही से या अतिउत्साही तरीके से कार्य करते हैं तो वे पश्चाताप या पश्चाताप दिखाएंगे। जब उनके अधिकारियों द्वारा स्पष्ट रूप से किए गए गलत कार्यों को उनके ध्यान में लाया जाता है, जिसके लिए कोई स्पष्टीकरण या बहाना नहीं होता है, तो कम से कम उचित मुआवजे के साथ यथासंभव क्षतिपूर्ति/बहाली की उम्मीद की जाती है। जनता की वास्तविक शिकायतों के संबंध में उनके कठोर रवैये और अनुचित मुकदमेबाजी में उनकी संलिप्तता को ठीक करने की आवश्यकता है।

6. इस न्यायालय ने बार-बार यह विचार व्यक्त किया है कि सरकारों और वैधानिक प्राधिकरणों को आदर्श या आदर्श वादी होना चाहिए और न्याय के मार्ग में बाधा डालने के लिए झूठी, तुच्छ, परेशान करने वाली, तकनीकी (लेकिन अन्यायपूर्ण) दलीलें नहीं पेश करनी चाहिए। ”

29 (2010) 1 एस. सी. सी. 512

/

[2023] 14 एस सी आर।

37. हम यहाँ कुछ ऐसे भूमि मालिकों को देखते हैं जिनकी भूमि शहरी सुधार न्यास, बीकानेर के लाभ के लिए अनिवार्य अधिग्रहण के अधीन थी। ट्रस्ट ने भूमि मालिकों को कोई नोटिस दिए बिना उनकी भूमि पर कब्जा कर लिया। यह भी स्पष्ट नहीं है कि क्या वास्तव में दर्ज किए गए खतेदारों को कोई मुआवजा दिया गया था। इसके बाद प्रत्यर्थियों ने याचिका दायर कर अपीलार्थी को भूमि मालिकों को उनकी भूमि से बेदखल करने से रोकने की मांग की। यह एक वास्तविक शिकायत की स्थिति थी जिसे भूमि मालिकों द्वारा विधि के समक्ष प्रचारित करने का प्रयास किया गया था। एक वादी के लिए जो प्रथम न्यायालय से आंशिक रूप से सफल हुआ है और बाद में अपीलीय स्तर पर दो न्यायालयों से पूरी राहत प्राप्त की है, यह बताया जाए कि उसका मुकदमा विचारणीय नहीं है? मेरी राय में, न्याय बेहतर होगा यदि प्रत्यर्थियों को उच्च न्यायालय के समक्ष मुकदमे का एक और दौर शुरू करने के लिए मजबूर नहीं किया जाता है ताकि बिना कोई नोटिस या उचित मुआवजा प्राप्त किए अपनी भूमि से वंचित होने से संबंधित उनकी शिकायतों का निवारण किया जा सके।

38. जैसा कि देखा जा सकता है, भूमि मालिकों ने अर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर को मुकदमे में प्रतिवादी के रूप में प्रस्तुत किया था क्योंकि उनकी शिकायत मुख्य रूप से अपीलार्थी के खिलाफ थी जिसने प्रत्यर्थियों को बेदखल कर दिया और उनकी भूमि पर कब्जा कर लिया। जिस राज्य प्राधिकरण ने भूमि मालिकों के साथ अन्याय किया, वह मुकदमे में प्रतिवादी था और उसने भी लिखित प्रस्तुतिकरण और साक्ष्य प्रस्तुत करके मुकदमे का विरोध किया। इस पृष्ठभूमि में, भूमि मालिकों पर मुकदमा न करने से स्पष्ट अन्याय होगा। इसलिए अपीलार्थी के विरुद्ध मुद्दा सं. (iii) का उत्तर दिया जाता है।

एफ. निष्कर्ष

39. अब यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि इस मामले में मुकदमेबाजी 25 वर्षों से जारी है। अनुभवजन्य डेटा 30 से पता चलता है कि भूमि विवाद भारत में सभी स्तरों के न्यायालयों को बाधित करते हैं, और कुछ अध्ययनों के अनुसार, पूर्ण संख्या और न्यायिक विचाराधीनता दोनों के संदर्भ में भूमि से संबंधित मुकदमे सबसे बड़े मामलों के लिए जिम्मेदार हैं। उन लोगों के लिए जो अनिवार्य अधिग्रहण के माध्यम से अपनी भूमि खोने जा रहे हैं, एक प्रमुख निवारण तंत्र उन्हें पहली बार में अदालतों तक पहुंचने में सक्षम बनाना है। पीड़ित भूमि खोने वाले को अक्सर

30 'न्याय तक पहुँच सर्वेक्षण 2015-16' (दक्षिण, मई 2016) <[HTTPS://दक्षिण भारत।ओ. आर. जी./डब्ल्यू. पी.-सामग्री/अपलोड/2016/05 दक्ष-न्याय तक पहुँच-सर्वेक्षण।पी. डी. एफ.](https://दक्षिण भारत।ओ. आर. जी./डब्ल्यू. पी.-सामग्री/अपलोड/2016/05 दक्ष-न्याय तक पहुँच-सर्वेक्षण।पी. डी. एफ.)> 19 सितंबर 2023 तक पहुँचा।

549

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [ऋषिकेश राँय, जे.] 550 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 14 एस. सी. आर.

न्यायिक प्रणाली से न्याय प्राप्त करने में असमर्थ। इसलिए, किरायेदारी अधिनियम, 1955 के अंतर्गत एक राजस्व न्यायालय से प्राप्त की जा सकने वाली सीमित राहत को ध्यान में रखते

हुए, मेरी राय में भूमि हारने वालों को दीवानी न्यायालय तक पहुंच से वंचित करने के लिए, अनिवार्य भूमि अधिग्रहण के सभी मामलों में अन्याय को बढ़ा देगा।

40. उपरोक्त का परिणाम यह है कि यहां अपीलकर्ता यह स्थापित करने में विफल रहा कि उन्होंने विधि के अनुसार भूमि का अधिग्रहण किया था या संबद्ध पक्ष को उचित मुआवजा दिया था। अपीलार्थी ने कानूनी प्रक्रिया की अवहेलना करके प्रत्यर्थियों की मूल्यवान भूमि पर जबरन कब्जा कर लिया और इस तरह प्रत्यर्थियों को प्रक्रियात्मक निष्पक्षता के संरक्षण से इनकार कर दिया। इस समय, मुझे अमेरिकी सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व सहायक न्यायाधीश, विलियम ओ. डगलस के शब्द याद आ रहे हैं, जिन्होंने अपनी सहमति में कहा था:

संयुक्त फासीवाद विरोधी शरणार्थी समिति बनाम मैक ग्रैथ 31 ने निम्नलिखित लिखा:

“यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो विधि द्वारा शासन और सनक या सनक द्वारा शासन के बीच के अंतर को दर्शाती है। सख्त प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपायों का दृढ़ता से पालन करना हमारा मुख्य आश्वासन है कि विधि के अंतर्गत समान न्याय होगा।”

41. अधिकारियों द्वारा उचित प्रक्रिया से प्रस्थान को देखते हुए, भूमि मालिकों को राहत दी गई। इस प्रकार उन फैसलों के साथ कोई असंवेदनशीलता नहीं देखी जाती है जिन्होंने अधिग्रहण प्रक्रिया को अमान्य कर दिया था। इसलिए उच्च न्यायालय का आक्षेपित निर्णय इस न्यायालय की मंजूरी के योग्य है।

42. अपीलार्थी अर्थात् अर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट हालाँकि जय नारायण व्यास योजना के उद्देश्य से शेष 2 बीघा विकसित करने और इसे भूखंडों में विभाजित करने का दावा करता है। इसलिए, जनहित को ध्यान में रखते हुए और इक्विटी को संतुलित करते हुए, यह स्पष्ट किया जाता है कि इस निर्णय में शर्तों के बावजूद, यदि अधिकारी चाहें, तो वे अब भी विधि की उचित प्रक्रिया का पालन करके भूमि का अधिग्रहण कर सकते हैं।

43. तदनुसार अपील को खारिज कर दिया जाता है और पक्षकारों को अपनी लागत वहन करने के लिए छोड़ दिया जाता है।

31 341 यूएस 123 (1951)

मनोज मिश्रा, जन्या.

1. मुझे अपने विद्वान भाई, न्यायमूर्ति ऋषिकेश राय के विद्वतापूर्ण निर्णय को पढ़ने का लाभ मिला, जिसने 2004 की एस. बी. सिविल नियमित दूसरी अपील संख्या 114 में पारित उच्च न्यायालय 1 के निर्णय और आदेश के खिलाफ दायर इस अपील को खारिज कर दिया। हालाँकि, चूंकि मेरी राय है कि वादी का मुकदमा उस भूमि के संबंध में बनाए रखने योग्य नहीं था जिसे एक अधिसूचना द्वारा अधिग्रहित किया गया था, इसलिए प्रतिवादी की अपील को अनुज्ञात जा सकती है। इसलिए, मैं अपनी राय अलग से दर्ज कर रहा हूँ।

अपील करें

2. यह उच्च विचारण न्यायालय के आदेश के खिलाफ एक प्रतिवादी की अपील है, जिसमें प्रथम अपीलीय विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और प्रत्यावर्तन की डिक्री के खिलाफ उसकी दूसरी अपील को खारिज कर दिया गया था। प्रथम अपीलीय विचारण न्यायालय ने न केवल निचली अदालत की डिक्री को इस हद तक खारिज कर दिया था कि उसने मुकदमे में मांगी गई पूरी राहत से इनकार कर दिया था, बल्कि प्रथम प्रतिवादी के मुकदमे को पूरी तरह से खारिज कर दिया था।

3. इस अपील में विचार के लिए उत्पन्न होने वाले मुद्दों की स्पष्ट समझ रखने के लिए, उस वाद में अभिवचनों का विज्ञापन करना उचित होगा जिसमें से अपील उत्पन्न होती है।

सूट

4. गोरधन दास 5 ने अर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर 6, नारायण दास (प्रतिवादी संख्या 2), कन्हैया लाल (प्रतिवादी संख्या 3) और गणेश राम (प्रतिवादी संख्या 1) के खिलाफ मुकदमा दायर किया। 4) विधि की उचित प्रक्रिया को अपनाए बिना ट्रस्ट को विवाद में भूमि में प्रवेश करने या अधिग्रहण करने से रोकने के लिए स्थायी निषेधात्मक निषेधाज्ञा की मांग करना।

1 जोधपुर में राजस्थान का उच्च न्यायालय 2 जिला न्यायाधीश, बीकानेर

3 अतिरिक्त सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ प्रभाग/अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट संख्या 1, बीकानेर)

4 1997 का मूल सूट No.29

5 प्रत्यर्थी के हित में पूर्व-आवश्यक संख्या 11/1 1/3 6 न्यास (अपीलार्थी)

7 खसरा सं. 211/81 और 239/83-नया सं. 294/83, 3 बीघा माप, बीकानेर सागर रोड 551 से सटे

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [मनोज मिश्रा, जे।]

शिकायत का मामला

5. वादी का मामला यह था कि-(क) 3 बीघा की विवादित भूमि वादी और प्रतिवादी द्वारा संयुक्त रूप से खरीदी गई थी। 2 (ख) विवादित भूमि के कुल क्षेत्रफल में से 1 बीघा, जिसमें भूखंड सं. 294/83, पेट्रोल पंप स्थापित करने के लिए गैर-कृषि उपयोग में परिवर्तित किया गया था और उस उद्देश्य के लिए, जिला कलेक्टर ने एन. ओ. सी. 9 जारी किया; (सी) ट्रस्ट ने किसी भी वैध तरीके से भूमि का अधिग्रहण नहीं किया था, फिर भी, उसने विवादित भूमि के कब्जे में खुद को मालिक के रूप में दिखाना शुरू कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप, जब ट्रस्ट ने <आई. डी. 1 पर भूमि का अधिग्रहण करने की धमकी दी, तो मुकदमा दायर करना पड़ा। इसके अतिरिक्त, यह अनुरोध किया गया कि भूमि अधिग्रहण के लिए न तो 1894 के अधिनियम 10 के प्रावधानों का पालन किया गया और न ही 1959 के अधिनियम 11 का,

क्योंकि न तो वादी या प्रतिवादी एन. ओ. एस. को सुनवाई का अवसर दिया गया था और न ही मुआवजे का। 2 से 4।

लिखित कथन में अपीलार्थी का मामला

6. अपीलार्थी 12 ने अपने लिखित बयान में शिकायत के मामले का खंडन किया और दलील दी कि-- खसरा नं.239/83 वह भंवरी देवी के नाम पर खड़ी थी, जिसे पहले ही अधिग्रहित कर लिया गया था, जबकि खसरा नं.211/81 जैनारायण विकास कॉलोनी योजना से बाहर है; विवादित भूमि का विधिवत अधिग्रहण किया गया है और खतेदारों को मुआवजे का भुगतान किया गया है 13; वादी का मुकदमा बनाए रखने योग्य नहीं है; विवादित भूमि कृषि होने के कारण, दीवानी न्यायालय का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है; और वादी अदालत में खुले हाथों से नहीं आया है क्योंकि विवादित भूमि पहले ही अधिग्रहित की जा चुकी थी और अभिलिखित खतेदारों को मुआवजे का भुगतान किया गया था।

संशोधित दलीलें

7. वाद की कार्यवाही के दौरान, वाद में व्यापक संशोधनों की मांग की गई और अनुज्ञात गई, जिसके परिणामस्वरूप 11.11.2002 पर एक संशोधित वाद का अंतिम रूप दिया गया। इसमें यह कहा गया था कि हालांकि, के आदेश के अनुसार

8 उत्तरदाता Nos.2 से 4

9 अनापत्ति प्रमाण पत्र

10 भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894

11 राजस्थान शहरी सुधार न्यास अधिनियम, 1959 12 मुकदमे में प्रतिवादी संख्या 1

13 वह व्यक्ति जिसका नाम अधिकारों के अभिलेख में कार्यकाल धारक के रूप में दर्ज है 552

/

[2023] 14 एस सी आर।

उच्च न्यायालय ने एस. बी. सिविल रिट याचिका No.2243/95 (भंवरलाल बनाम एस. राजस्थान राज्य), ट्रस्ट ने 10.06.1998 पर विवाद में भूमि का कब्जा ले लिया था, लेकिन रिट कोर्ट का आदेश किसी अन्य भूमि से संबंधित था। इसलिए, वादी के कब्जे को बहाल करने के लिए एक अनिवार्य निषेधाज्ञा के लिए राहत मांगी गई थी।

8. अपीलार्थी के नेतृत्व में संशोधित लिखित बयान में यह कहा गया था कि वादी द्वारा मुकदमा दायर करने के बाद, तहसीलदार से रिपोर्ट प्राप्त की गई थी। तब यह पता चला कि वादी ने अन्य लोगों के साथ मिलकर दिनांक 2 और 1 के बिक्री विलेखों के माध्यम से विवादित भूमि खरीदी थी और उस भूमि के 1 बीघा को गैर-कृषि उपयोग के लिए परिवर्तित करने के लिए एक आवेदन भी दिया था, जिसकी अनुज्ञात गई थी, और रूपांतरण शुल्क के

भुगतान पर, पेट्रोल पंप स्थापित करने के लिए एनओसी जारी की गई थी। हालाँकि, यह स्पष्ट किया गया था कि अपीलार्थी ने उचित प्रक्रिया का पालन करने के बाद 24 बीघा और 12 बीघा भूमि का अधिग्रहण किया था जिसमें खसरा (आईडी1) शामिल था और इसके मुआवजे का भुगतान अभिलिखित मालिकों को किया गया था। यह भी कहा गया कि वादी ने अधिग्रहण पर कभी कोई आपत्ति नहीं जताई थी। उस भूमि के 1 बीघा के संबंध में, जिसके लिए पेट्रोल पंप स्थापित करने के लिए एनओसी जारी की गई थी, यह कहा गया था कि राज्य ने दिनांक 1 के आदेश के अनुसार इसे अपने मालिक को वापस करने का निर्णय लिया था। संशोधित लिखित बयान के पैराग्राफ 18 में, यह स्पष्ट रूप से कहा गया था कि विवादित भूमि के 2 बीघा का अधिग्रहण किया गया था और इसका मुआवजा अभिलिखित कार्यकाल-धारकों को दिया गया था।

विचारण न्यायालय के निष्कर्ष

9. निचली विचारण न्यायालय ने पाया कि पक्षों के बीच कोई विवाद नहीं है कि विवादित 3 बीघा भूमि में से 1 बीघा को गैर-कृषि भूमि में परिवर्तित कर दिया गया था और इसे राज्य द्वारा अधिग्रहित नहीं किया गया था। इसलिए, वादी उस एक बीघा का अधिकार प्राप्त करने का हकदार है। शेष 2 बीघा भूमि के संबंध में, निर्णय के पैराग्राफ 15 में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि हालाँकि वादी ने इसे वर्ष 1970 के अलग-अलग बिक्री-विलेखों के माध्यम से खरीदा था, जामबंदी (यानी अधिकारों का रिकॉर्ड) में, वादी का नाम दर्ज नहीं किया गया था, बल्कि यह पिछले खतेदार के नाम को दोहराता रहा। इसके अलावा, 1959 के अधिनियम की धारा 52 (2) के अंतर्गत दर्ज किए गए खतेदारों को नोटिस जारी किया गया था, वर्ष 1985 में पुरस्कार पारित किया गया था और उन्हें मुआवजा भी दिया गया था। विचारण न्यायालय ने यह भी कहा कि वादी ने जानकारी के बावजूद कोई आपत्ति नहीं जताई, भले ही ट्रस्ट ने इसे रहने योग्य बनाने के लिए भूमि पर विकास कार्य शुरू कर दिया था। एक गुजरता हुआ अवलोकन 553

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [मनोज मिश्रा, जे।]

यह भी कहा गया कि वादी का इरादा भूमि का आनंद लेना और बाद में उस पर दावा करना प्रतीत होता है। ट्रायल कोर्ट ने इस प्रकार निष्कर्ष निकाला कि वादी ने न्यायालय का रुख साफ हाथों से नहीं किया था। नतीजतन, वाद का फैसला केवल उस विवादित भूमि के 1 बीघा की सीमा तक किया गया था, जिसके बारे में अपीलार्थी ने अपना दावा छोड़ दिया था।

प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष अपील

10. मुकदमे को आंशिक रूप से खारिज करने से व्यथित होकर, वादी ने अपील 14 को प्राथमिकता दी। न्यास द्वारा कोई अपील नहीं की गई थी। नतीजतन, विवादित भूमि के 1 बीघा की सीमा तक निचली विचारण न्यायालय का आदेश न्यास के खिलाफ शून्य हो गया।

11. प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष, वादी की ओर से, यह तर्क दिया गया था कि भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही वर्ष 1972 में शुरू हुई थी, जबकि वादी के पक्ष में दो बिक्री-विलेख वर्ष 1970 में दर्ज किए गए थे। बिक्री-विलेख राज्य के अधिकारियों की जानकारी में थे क्योंकि 1 बीघा भूमि को गैर-कृषि भूमि में बदलने की मांग की गई थी, और कलेक्टर ने वादी के पक्ष में एनओसी जारी की थी। इसलिए, भले ही वादी का नाम खतेदार के रूप में दर्ज नहीं किया गया था, यह माना जा सकता है कि राज्य और उसके अधिकारी वादी और अन्य सह-खरीदारों (यानी प्रतिवादी संख्या) के स्वामित्व अधिकारों के बारे में जानते थे।²⁴। फिर भी, वादी को प्रस्तावित अधिग्रहण की कोई सूचना नहीं दी गई थी। इसलिए, अधिग्रहण अमान्य है। यह भी तर्क दिया गया कि वादी और प्रतिवादी नं. 24 लगातार कब्जे में रहे हैं, जो 10.06.1998 पर मुकदमे के लंबित रहने के दौरान बाधित हुआ था।

प्रथम अपीलीय न्यायालय के निष्कर्ष

12. प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अपने निर्णय के पैराग्राफ 14 में पक्षकारों के स्वीकार किए गए मामले को नोट किया कि वादी द्वारा भूमि खरीदी गई थी, दिनांक 02.03.1970 और 16.03.1970 के बिक्री-विलेखों के माध्यम से जबकि अधिग्रहण के लिए कार्यवाही शुरू करने वाली अधिसूचना, 09.06.1972 पर जारी की गई थी। फिर भी, वादी को प्रस्तावित अधिग्रहण का नोटिस नहीं दिया गया था। निर्णय के पैराग्राफ 18 में, पहली अपीलीय न्यायालय ने कहा कि अधिग्रहण से पहले, वादी को कृषि भूमि को गैर-कृषि भूमि में बदलने के लिए एनओसी जारी की गई थी, इसलिए यह माना जाना चाहिए

14 2004 554 का अपील फरमान No.30

/

[2023] 14 एस सी आर।

कि राज्य वादी के स्वामित्व अधिकार से अवगत था। फिर भी, वादी को अधिग्रहण का नोटिस नहीं दिया गया था। इन परिस्थितियों में, राजस्व अभिलेख में वादी के नाम का परिवर्तन न करने से वादी का यह दावा विफल नहीं होगा कि अधिग्रहण अधिसूचना उस पर नोटिस न देने के लिए खराब थी। इन टिप्पणियों के साथ, और भूमि का कब्जा 10.6.1998 पर लिया गया था, पहली अपीलीय न्यायालय ने वादी के मुकदमे को पूरी तरह से फैसला सुनाया।

उच्च न्यायालय के समक्ष दूसरी अपील

13. प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर, अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष दूसरी अपील को प्राथमिकता देते हुए तर्क दिया कि (क) जब तक स्वामित्व की घोषणा के लिए राहत नहीं मांगी जाती है, तब तक केवल निषेधाज्ञा का मुकदमा कायम नहीं रखा जा सकता है; (ख) दीवानी अदालत को मुकदमे का फैसला करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है जब तक कि विवादग्रस्त भूमि अधिग्रहण का विषय है और 1959 के अधिनियम

की धारा 52 के अंतर्गत, राजपत्र में अधिसूचना के प्रकाशन पर, भूमि सभी बाधाओं से निशुल्क राज्य में निहित थी; और (ग) वादी एक प्रतिवादी के रूप में राज्य को शामिल करने में विफल रहा था, भले ही वह एक आवश्यक पक्ष था।¹⁴ खंडन में, वादी की ओर से, यह तर्क दिया गया कि चूंकि अधिग्रहण के लिए अधिसूचना भूमि के मालिक पर नोटिस की सेवा से पहले नहीं थी, जैसा कि 1959 अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (2) द्वारा विचार किया गया था, इसलिए अधिग्रहण अमान्य था और इसलिए, सिविल न्यायालय ने मांगी गई राहत देने के लिए अधिकार क्षेत्र निर्धारित किया।

हाईकोर्ट का फैसला

15. उच्च न्यायालय ने राय दी कि अधिग्रहण से पहले वर्ष 1970 में वादी द्वारा भूमि की खरीद विवादित नहीं थी; अधिग्रहण अधिसूचना वादी को नोटिस दिए बिना जारी की गई थी, इसलिए, अधिग्रहण अमान्य था और जैसा कि स्थापित किया गया था, मुकदमा बनाए रखने योग्य था। इसके अलावा, वादी मुकदमे की स्थापना की तारीख तक कब्जे में था। इस प्रकार इसने प्रथम अपीलीय न्यायालय के आदेश को बरकरार रखा और दूसरी अपील को खारिज कर दिया।¹⁶ ट्रस्ट अपनी दूसरी अपील खारिज होने से व्यथित है और हमारे समक्ष अपील कर रहा है।

17. हमने प्रतिवादी-अपीलार्थी की ओर से अधिवक्ता-ऑन-रिकॉर्ड श्री राजीव सिंह और प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान वरिष्ठ वकील श्री मनोज स्वरूप की सहायता से विद्वान वरिष्ठ वकील श्री अरुणेश्वर गुप्ता को सुना है।

555

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [मनोज मिश्रा, जे।]

अपीलार्थी की ओर से प्रस्तुतियाँ

18. अपीलार्थी के विद्वान वकील ने तर्क दिया कि 1959 के अधिनियम का अध्याय VII न्यास द्वारा भूमि अधिग्रहण और निपटान से संबंधित है। 1959 के अधिनियम की धारा 52 भूमि के अनिवार्य अधिग्रहण का प्रावधान करती है। धारा 52 की उप-धारा (1) राज्य सरकार को सरकारी राजपत्र में एक अधिसूचना प्रकाशित करके भूमि अधिग्रहण करने का अधिकार देती है जिसमें विशेष उद्देश्य निर्दिष्ट किया गया है जिसके लिए भूमि की आवश्यकता है और उसमें कहा गया है कि राज्य सरकार ने उसके अनुसरण में भूमि अधिग्रहण करने का निर्णय लिया है। धारा 52 की उप-धारा (4) में यह प्रावधान है कि जब उप-धारा (1) के अंतर्गत एक सूचना आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशित की जाती है, तो भूमि, ऐसे प्रकाशन की तारीख को और उससे, सभी बाधाओं से निशुल्क राज्य सरकार में पूरी तरह से निहित होगी। धारा 52 की उप-धारा (5) में यह प्रावधान है कि जहां कोई भूमि उप-धारा (4) के अंतर्गत राज्य सरकार में निहित है, राज्य सरकार लिखित सूचना द्वारा किसी भी व्यक्ति को, जो भूमि के कब्जे में हो सकता है, राज्य सरकार या उसके द्वारा इस संबंध में विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति को नोटिस की सेवा के 30 दिनों के भीतर आत्मसमर्पण करने या उसका कब्जा

सौंपने का आदेश दे सकती है। धारा 52 की उप-धारा (7) में प्रावधान है कि जहां न्यास के लिए भूमि का अधिग्रहण किया गया है, वहां राज्य सरकार, भूमि का कब्जा लेने के बाद और न्यास द्वारा धारा 53 के अंतर्गत निर्धारित मुआवजे की राशि और अधिग्रहण के संबंध में राज्य सरकार द्वारा किए गए अन्य शुल्कों के भुगतान पर, उस न्यास को भूमि हस्तांतरित करेगी जिसके लिए भूमि का अधिग्रहण किया गया है।

19. विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि मुआवजे के निर्धारण के लिए तंत्र, इसके भुगतान का तरीका और उसके संबंध में विवादों के समाधान के लिए 1959 के अधिनियम की धारा 53, 54, 55, 56, 57, 58 और 59 द्वारा प्रदान किया गया है। इस प्रकार, जहां तक भूमि अधिग्रहण, उसके अधिग्रहण के लिए मुआवजे का भुगतान और उसके लिए देय मुआवजे के संबंध में विवादों के निपटारे का संबंध है, 1959 का अधिनियम एक पूर्ण संहिता है। नतीजतन, आवश्यक निहितार्थ से, दीवानी न्यायालय का अधिकार क्षेत्र उस भूमि के संबंध में किसी भी दावे पर विचार करने से वर्जित है। इसके अलावा, एक बार जब राज्य में भूमि सभी बाधाओं से निशुल्क हो जाती है, तो अधिग्रहण अधिसूचना की वैधता की घोषणा की मांग के अभाव में, केवल निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा बनाए रखने योग्य नहीं होगा। उनके अनुसार, निचली विचारण न्यायालय को मुकदमे को इस हद तक खारिज करने में न्यायसंगत ठहराया गया था कि भूमि अधिसूचना द्वारा कवर की गई थी, जबकि पहली अपीलिय विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने मैनिफेस्ट 556 को प्रतिबद्ध किया था।

/

[2023] 14 एस सी आर।

मुकदमे को बनाए रखने योग्य ठहराने में विधि की त्रुटि। उपरोक्त के अलावा, यह प्रस्तुत किया गया था कि स्वीकार्य रूप से विवादित भूमि के 3 बीघा में से 2 बीघा कृषि भूमि थी, इसलिए, राजस्थान किरायेदारी अधिनियम, 1955 (संक्षेप में, "1955 अधिनियम") की धारा 207 के आधार पर, मुकदमा एक दीवानी न्यायालय के समक्ष वर्जित था और केवल एक राजस्व न्यायालय में इसका नेतृत्व किया जा सकता था।

20. 1959 के अधिनियम की धारा 52 (1) के अंतर्गत अधिसूचना से पहले भूमि के मालिकों पर नोटिस की गैर-सेवा के संबंध में, अपीलार्थी के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि मूल खतेदारों, जो अधिकारों के रिकॉर्ड में दर्ज थे, को प्रस्तावित अधिग्रहण की सूचना दी गई थी, 1959 के अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (2) के प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन किया गया था। इसलिए, धारा 52 की उप-धारा (1) के अंतर्गत अधिसूचना को अमान्य नहीं माना जा सकता है।

21. उसकी प्रस्तुतियों के समर्थन में, अपीलार्थी के विद्वान वकील ने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा रखा:

- (i) आहूजा इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम।कर्नाटक राज्य और अन्य **15**; (ii) भोला शंकर बनाम जिला भूमि अधिग्रहण कार्यालय, अलीगढ़ और अन्य **16**;
- (iii) आयुक्त, बेंगलोर विकास प्राधिकरण और एक अन्य बनाम बृजेश रेड्डी और अन्य **17**;
- ((iv) किरण सिंह बनाम चमन पासवान **18**; और
- (v) मुंशी राम बनाम नगरपालिका समिति, छेहरता **19**.

उत्तरदाताओं की ओर से प्रस्तुतियाँ

22. इसके विपरीत, प्रत्यर्थियों के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि 1959 के अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (2) के अंतर्गत, राज्य सरकार भूमि के मालिक और किसी अन्य व्यक्ति को, जो राज्य सरकार की राय में, उस समय के भीतर, जो नोटिस में निर्दिष्ट किया जा सकता है, कारण दिखाने के लिए बुलाने के लिए बाध्य है, क्यों

15 (2003) 5 एससीसी 365 16 (1973) 2 एससीसी 59 17 (2013) 3 एससीसी 66 18 एआईआर 1954 एससी 340 19 (1979) 3 एससीसी 83 557

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [मनोज मिश्रा, जे।]

भूमि का अधिग्रहण नहीं किया जाना चाहिए। धारा 52 की उप-धारा (1) के अंतर्गत अधिसूचना प्रकाशित करने से पहले ऐसी सूचना जारी करने की आवश्यकता अनिवार्य है। इसके अभाव में, धारा 52 की उप-धारा (1) के अंतर्गत अधिसूचना अमान्य है। इसलिए, धारा 52 की उप-धारा (4) के अंतर्गत कोई निहित माना नहीं जा सकता है। इस प्रकार, मुकदमा बनाए रखने योग्य था, इसके बावजूद कि अधिसूचना को रद्द करने के लिए कोई राहत नहीं मांगी गई थी। अपनी दलीलों के समर्थन में, प्रत्यर्थियों के विद्वान वकील ने संविधान पीठ के फैसले पर भरोसा किया

धुलाभाई बनाम मध्य प्रदेश राज्य मामले में इस न्यायालय का निर्णय 20 और फर्म सेठ राधा किशन बनाम नगर समिति मामले में तीन न्यायाधीशों की पीठ का निर्णय 21।

जिन प्रश्नों पर हम विचार कर सकते हैं

23. प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर विचार करने पर, मेरे विचार में, निर्धारण के लिए निम्नलिखित प्रश्न उत्पन्न होते हैं:

(i) क्या वादी पर 1959 अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (2) के अंतर्गत नोटिस तामील करने में विफलता के लिए, 1959 अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (1) के अंतर्गत भूमि अधिग्रहण की अधिसूचना को दीवानी न्यायालय द्वारा शून्य माना जा सकता है?

((ख) क्या अधिग्रहण अधिसूचना द्वारा आच्छादित भूमि के संबंध में, निषेधाज्ञा के लिए वादी का मुकदमा, एक घोषणात्मक राहत की मांग किए बिना और वह भी, राज्य को प्रतिवादी के रूप में शामिल किए बिना, बनाए रखने योग्य है?

((ग) क्या वादी के दीवानी मुकदमे को भी 1955 के अधिनियम की धारा 207 (2) द्वारा वर्जित किया गया था?

चर्चा और विश्लेषण

24. यद्यपि उपरोक्त मुद्दे आपस में जुड़े हुए हैं, लेकिन स्पष्टता के लिए, मैं उनसे अलग से निपटने का प्रस्ताव करता हूं।

मुद्दा संख्या (i)-क्या 1959 के अधिनियम की धारा 52 (1) के अंतर्गत अधिसूचना को दीवानी न्यायालय द्वारा अमान्य माना जा सकता था?

25. मुद्दा नं. पर आगे बढ़ने से पहले।((i) यह अवलोकन करना उचित है कि जब कोई कार्य शून्य होता है, तो वह शून्य होता है और उसकी उपेक्षा की जा सकती है और उस पर महाभियोग चलाया जा सकता है।

20 (1968) 3 एससीआर 662 21 (1964) 2 एससीआर 273 558

/

[2023] 14 एस सी आर।

किसी भी न्यायालय या न्यायाधिकरण के समक्ष किसी भी कार्यवाही में जब भी उस पर भरोसा किया जाता है। दूसरे शब्दों में, यह एक "संपार्श्विक हमले" के अधीन है। लेकिन, नवाबखान में

[illegible]

कर्नाटक 23, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यदि अधिकारियों के अवैध कार्यों को स्व-निर्धारित शून्यता की अवहेलना की जाती है, तो चौंका देने वाले परिणाम सामने आएंगे। तब कानूनी स्थिति के आलोक में, जो प्रश्न विचार के लिए आता है, वह यह है कि क्या 1959 अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (2) के अंतर्गत प्रस्तावित अधिग्रहण की सूचना की तामील के अभाव में, 1959 अधिनियम की धारा 52 (1) के अंतर्गत अधिग्रहण अधिसूचना को शून्य माना जा सकता है और इसलिए, संपार्श्विक हमले के लिए असुरक्षित माना जा सकता है।

26. उपरोक्त मुद्दे को उचित रूप से संबोधित करने के लिए, पहले 1959 के अधिनियम के प्रावधानों की जांच करना उपयोगी होगा जो भूमि के अनिवार्य अधिग्रहण से संबंधित है। 1959 के अधिनियम का अध्याय VII भूमि अधिग्रहण और निपटान से संबंधित है। धारा 52 भूमि के अनिवार्य अधिग्रहण से संबंधित है। सुविधा के लिए, इसे नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:

“52. भूमि का अनिवार्य अधिग्रहण-(1) जहां प्रतिनिधित्व पर हो।

न्यास से राज्य सरकार को यह प्रतीत होता है कि इस अधिनियम के अंतर्गत सुधार के उद्देश्य से या किसी अन्य उद्देश्य के लिए किसी भी भूमि की आवश्यकता है, राज्य सरकार आधिकारिक राजपत्र में एक सूचना प्रकाशित करके ऐसी भूमि का अधिग्रहण कर सकती है जिसमें उस विशेष उद्देश्य को निर्दिष्ट किया गया है जिसके लिए ऐसी भूमि की आवश्यकता है और जिसमें कहा गया है कि राज्य सरकार ने इस धारा के अनुसरण में भूमि का अधिग्रहण करने का निर्णय लिया है।

(2) उप-धारा (1) के अंतर्गत एक सूचना प्रकाशित करने से पहले, राज्य सरकार एक अन्य सूचना द्वारा भूमि के मालिक और किसी अन्य व्यक्ति से, जो राज्य सरकार की राय में इसमें रुचि रखता है, ऐसे समय के भीतर, जो सूचना में निर्दिष्ट किया जाए, कारण बताएगी कि भूमि का अधिग्रहण क्यों नहीं किया जाना चाहिए।

(3) भूमि के स्वामी और उसमें रुचि रखने वाले किसी अन्य व्यक्ति द्वारा दिखाए गए कारण, यदि कोई हो, पर विचार करने के बाद और ऐसे मालिक और व्यक्ति को सुनवाई का अवसर देने के बाद, राज्य सरकार ऐसे आदेश पारित कर सकती है जो वह मानती है।

22 (1974) 2 एससीसी 121 23 (2018) 6 एससीसी 162 559

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [मनोज मिश्रा, जे।]

(4) जब उप-धारा (1) के अंतर्गत एक सूचना आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशित की जाती है, तो भूमि, ऐसे प्रकाशन की तारीख को और उससे, सभी बाधाओं से निशुल्क राज्य सरकार में पूरी तरह से निहित होगी। (5) जहां कोई भूमि उप-धारा (4) के अंतर्गत राज्य सरकार में निहित है, वहां राज्य सरकार, लिखित सूचना द्वारा, किसी भी व्यक्ति को, जो भूमि के कब्जे में हो सकता है, राज्य सरकार या उसके द्वारा विधिवत अधिकृत किसी व्यक्ति को नोटिस

की सेवा के तीस दिनों के भीतर आत्मसमर्पण करने या उसका कब्जा सौंपने का आदेश दे सकती है।

(6) यदि कोई व्यक्ति उप-धारा (5) के अंतर्गत दिए गए आदेश का पालन करने से इनकार करता है या विफल रहता है, तो राज्य सरकार भूमि का कब्जा ले सकती है और उस उद्देश्य के लिए ऐसे बल का उपयोग कर सकती है जो आवश्यक हो।

(7) जहां न्यास के लिए भूमि का अधिग्रहण किया गया है, वहां राज्य सरकार, भूमि का कब्जा लेने के बाद और न्यास द्वारा धारा 53 के अंतर्गत निर्धारित मुआवजे की राशि का भुगतान करने पर, उस पर ब्याज की राशि और अधिग्रहण के संबंध में राज्य सरकार द्वारा किए गए अन्य शुल्कों के भुगतान पर, भूमि को न्यास को उस उद्देश्य के लिए हस्तांतरित करेगी जिसके लिए भूमि का अधिग्रहण किया गया है। "

27. 1959 के अधिनियम की धारा 53 भूमि के अनिवार्य अधिग्रहण के लिए मुआवजे के भुगतान से संबंधित है। धारा 53 की उप-धारा (3) में प्रावधान है कि जहां मुआवजे की राशि राज्य सरकार और क्षतिपूर्ति किए जाने वाले व्यक्ति के बीच समझौते द्वारा निर्धारित की जा सकती है, वहां इसका निर्धारण ऐसे समझौते के अनुसार किया जाएगा। धारा 53 की उप-धारा (4) में प्रावधान है कि जहां ऐसा कोई समझौता नहीं होता है, राज्य सरकार उस व्यक्ति के निर्धारण के लिए मामले को कलेक्टर को भेजेगी जिसे मुआवजे की राशि का भुगतान किया जाना है और इस तरह के अधिग्रहण के लिए मुआवजे की राशि का भुगतान किया जाना है।

28. 1959 के अधिनियम की धारा 54 में प्रावधान है कि मुआवजे की राशि निर्धारित करने के कलेक्टर के निर्णय से व्यथित कोई भी पक्ष, ऐसे निर्णय की तारीख से साठ दिनों के भीतर, अधिकार क्षेत्र वाले जिला न्यायाधीश की न्यायालय में अपील कर सकता है।

29. 1959 के अधिनियम की धारा 55 में जिला न्यायाधीश के न्यायालय को मुआवजे के विभाजन के संबंध में विवादों के संदर्भ का प्रावधान है। इसमें लिखा है:

560 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 14 एस. सी. आर.

"55. मुआवजे के विभाजन के बारे में विवाद।- अगर कोई विवाद है

मुआवजे के बंटवारे का दावा करने वाले व्यक्तियों के बीच मुआवजे के बंटवारे के संबंध में राज्य सरकार इस तरह के विवाद को अधिकार क्षेत्र वाले जिला न्यायाधीश के न्यायालय के निर्णय के लिए भेजेगी। "30. धारा 56 अधिनियम की धारा 55 के अंतर्गत जिला न्यायाधीश के फैसले से व्यथित व्यक्ति को उच्च न्यायालय में अपील करने का अधिकार प्रदान करती है।

31. धारा 57 मुआवजे के भुगतान या उसे न्यायालय में जमा करने के तरीके का प्रावधान करती है।

32. धारा 58 न्यायालय को न्यायालय में जमा मुआवजे की राशि का निवेश करने का अधिकार देती है।

33. धारा 59 में यह प्रावधान है कि यदि उस अध्याय के पूर्वगामी प्रावधानों के अलावा, अधिनियम के किसी प्रावधान के अंतर्गत भुगतान किए गए या भुगतान करने के लिए प्रस्तावित मुआवजे की पर्याप्तता के बारे में कोई प्रश्न या विवाद उत्पन्न होता है, तो मामले का निर्धारण जिला न्यायाधीश द्वारा किया जाएगा, जो न्यास या दावेदार द्वारा एक निर्दिष्ट अवधि के भीतर उसे दिए गए संदर्भ पर अधिकारिता रखता है।

34. धारा 60 न्यास द्वारा भूमि के निपटान का प्रावधान करती है। 35. 1959 के अधिनियम के अध्याय VII के प्रावधानों के संदर्भ में यह स्पष्ट किया गया है कि एक बार जब अधिग्रहण अधिसूचना 1959 के अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (1) के अंतर्गत सरकारी राजपत्र में प्रकाशित हो जाती है, तो धारा 52 की उप-धारा (4) के आधार पर, भूमि, ऐसे प्रकाशन की तारीख को और उसके बाद से, राज्य सरकार में सभी बोझों से पूरी तरह से निशुल्क होगी और उसके बाद, भूमि में रुचि रखने वाला मालिक या व्यक्ति मुआवजा प्राप्त करने का हकदार होगा। इसके अलावा, क्षतिपूर्ति किसके लिए देय है और देय राशि ऐसे सभी मुद्दे हैं जिनके लिए 1959 के अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत एक तंत्र है।

36. अब, जो प्रश्न विचार के लिए आता है वह यह है कि क्या 1959 के अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (1) के अंतर्गत अधिसूचना को धारा 52 की उप-धारा (2) के अंतर्गत वादी और भूमि के अन्य सह-मालिकों पर नोटिस की गैर-सेवा के लिए शून्य माना जा सकता है, जिन्होंने पूर्व के मालिकों या उनके पूर्ववर्तियों से इसे खरीदा था, जो अधिकारों के रिकॉर्ड में दर्ज किए गए थे।

561

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [मनोज मिश्रा, जे।]

37. प्रत्यर्थियों के विद्वान वकील के अनुसार, जहां 1959 अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (2) के अनिवार्य प्रावधानों का पालन नहीं किया जाता है, उसके तहत जारी अधिसूचना एक शून्य होगी और इसलिए, उचित राहत देने के लिए सिविल कोर्ट की अधिकारिता को समाप्त नहीं किया जाएगा। प्रस्ताव को आगे बढ़ाते हुए, यह प्रस्तुत किया गया कि सिविल न्यायालय की अधिकारिता का निष्कासन निश्चित रूप से एक मामला नहीं हो सकता है, भले ही विशेष न्यायाधिकरणों के आदेशों की वास्तविकता का प्रावधान किया गया हो, विशेष रूप से, जहां संबंधित अधिनियम के प्रावधानों का पालन नहीं किया गया है या सांविधिक न्यायाधिकरण ने न्यायिक प्रक्रिया के मौलिक सिद्धांतों के अनुरूप कार्य नहीं किया है।

38. उपरोक्त निवेदन के समर्थन में, प्रत्यर्थी के विद्वान वकील ने धुलाभाई (ऊपर) में इस न्यायालय के फैसलों पर भरोसा किया और

फर्म सेठ राधा किशन (ऊपर)।

39. धुलाभाई (उपरोक्त) मामले में इस न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी ने बिक्री कर की वसूली के लिए एक मुकदमा दायर किया था जिसे कथित रूप से मध्य प्रदेश राज्य द्वारा अवैध रूप से वसूल किया गया था। राज्य ने यह दावा करते हुए मुकदमे का विरोध किया कि यह मध्य भारत बिक्री कर अधिनियम की धारा 17 द्वारा वर्जित है। जिला न्यायाधीश की न्यायालय ने मुकदमे का फैसला सुनाया। राज्य की अपील पर, उच्च न्यायालय ने निर्णय को यह कहते हुए उलट दिया कि मुकदमे पर रोक लगा दी गई थी, भले ही राजस्व द्वारा यह स्वीकार किया गया था कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 301 के प्रतिबंध को देखते हुए कर नहीं लगाया जा सकता था। उस संदर्भ में, इस न्यायालय के लिए यह निर्णय लेने के लिए प्रश्न उत्पन्न हुआ कि क्या मुकदमा उस अधिनियम की धारा 17 द्वारा या अधिनियम से उत्पन्न किसी निहितार्थ द्वारा स्पष्ट रूप से वर्जित था। उसमें अपीलार्थी की ओर से तर्क यह था कि यदि यह कानून, नियमों या अधिसूचना के वैध ढांचे के भीतर अधिरोपण की शुद्धता का प्रश्न था, तो धारा 17 संचालित हो सकती थी, लेकिन तब नहीं जब अधिरोपण एक शून्य विधि के अंतर्गत था। कई फैसलों पर विचार करने के बाद, संविधान पीठ ने कानूनी स्थिति का सारांश इस प्रकार दिया:

“35. ... इस न्यायालय में व्यक्त किए गए विविध विचारों की इस जांच का परिणाम इस प्रकार कहा जा सकता है:

(1) जहां कानून विशेष न्यायाधिकरणों के आदेशों को वैधता प्रदान करता है, वहां दीवानी अदालतों के अधिकार क्षेत्र को बाहर रखा जाना चाहिए यदि ऐसा करने के लिए पर्याप्त उपाय है जो दीवानी अदालतें आम तौर पर एक मुकदमे में करती हैं। हालाँकि, इस तरह के प्रावधान उन मामलों को बाहर नहीं करते हैं 562

/

[2023] 14 एस सी आर।

जहाँ विशेष अधिनियम के प्रावधानों का पालन नहीं किया गया है या सांविधिक न्यायाधिकरण ने न्यायिक प्रक्रिया के मौलिक सिद्धांतों के अनुरूप कार्य नहीं किया है।

(2) जहां न्यायालय की अधिकारिता की एक स्पष्ट बाधा है, वहां प्रदान किए गए उपचारों की पर्याप्तता या पर्याप्तता को सुनिश्चित करने के लिए विशेष अधिनियम की योजना की जांच प्रासंगिक हो सकती है, लेकिन दीवानी न्यायालय की अधिकारिता को बनाए रखने के लिए निर्णायक नहीं है।

जहां कोई स्पष्ट बहिष्कार नहीं है, वहां उपचारों की जांच और इरादे को पूरा करने के लिए विशेष अधिनियम की योजना आवश्यक हो जाती है और जांच का परिणाम निर्णायक हो सकता है। बाद के मामले में यह देखना आवश्यक है कि क्या कानून एक विशेष अधिकार या दायित्व पैदा करता है और अधिकार या दायित्व के निर्धारण के लिए प्रावधान करता है और आगे यह निर्धारित करता है कि उक्त अधिकार और दायित्व के बारे में सभी प्रश्न इस प्रकार

गठित न्यायाधिकरणों द्वारा निर्धारित किए जाएंगे, और क्या सिविल अदालतों में कार्यों से जुड़े उपचार आमतौर पर उक्त क़ानून द्वारा निर्धारित किए जाते हैं या नहीं।

(3) विशेष अधिनियम के प्रावधानों को चुनौती देना क्योंकि यह अधिकार से बाहर है, उस अधिनियम के अंतर्गत गठित न्यायाधिकरणों के समक्ष नहीं लाया जा सकता है। यहां तक कि उच्च न्यायालय भी न्यायाधिकरणों के निर्णय के संशोधन या संदर्भ पर उस प्रश्न में नहीं जा सकता है।

(4) जब किसी प्रावधान को पहले ही असंवैधानिक घोषित कर दिया जाता है या किसी प्रावधान की संवैधानिकता को चुनौती दी जानी होती है, तो मुकदमा दायर किया जा सकता है। यदि दावा स्पष्ट रूप से सीमा अधिनियम द्वारा निर्धारित समय के भीतर है, लेकिन यह एक मुकदमे को बदलने के लिए एक अनिवार्य उपाय नहीं है, तो प्रमाणपत्र की एक रिट में धनवापसी के लिए एक निर्देश शामिल हो सकता है।

(5) जहां विशेष अधिनियम में संवैधानिक सीमाओं से अधिक या अवैध रूप से एकत्र किए गए कर की वापसी के लिए कोई तंत्र नहीं है, एक मुकदमा निहित है।

(6) इसकी संवैधानिकता के अलावा मूल्यांकन की शुद्धता के सवाल अधिकारियों के निर्णय के लिए हैं और यदि अधिकारियों के आदेशों को अवैध घोषित किया जाता है या विशेष अधिनियम में एक स्पष्ट निषेध है तो एक दीवानी मुकदमा नहीं होता है। दोनों ही मामलों में विशेष अधिनियम की योजना की जांच की जानी चाहिए क्योंकि यह एक प्रासंगिक जांच है।

563

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [मनोज मिश्रा, जे।]

(7) दीवानी न्यायालय की अधिकारिता के बहिष्करण का आसानी से अनुमान नहीं लगाया जा सकता है जब तक कि उपरोक्त शर्तें लागू नहीं होती हैं। "

(जोर दिया गया)

40. फर्म सेठ राधा किशन (ऊपर) में, वह प्रश्न जिसके लिए गिर गया

यह निर्धारित करना था कि क्या पंजाब नगरपालिका अधिनियम, 1911 के प्रावधानों के अंतर्गत नगरपालिका द्वारा एकत्र किए गए अंतिम कर की वापसी का दावा करने वाला कोई मुकदमा दीवानी न्यायालय में होगा। निचली विचारण न्यायालय ने मुकदमे पर फैसला सुनाया कि कर लगाना/संग्रह करना अवैध था। अपील पर, पंजाब उच्च न्यायालय ने कहा कि भले ही कर लगाने को अधिकृत नहीं किया जा सकता है, लेकिन दीवानी अदालत को मुकदमे पर विचार करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है क्योंकि अधिनियम के तहत अधिकारियों के गलत आदेशों के खिलाफ अपील के माध्यम से उपचार का प्रावधान है। उस संदर्भ में, इस न्यायालय ने कई निर्णयों पर विचार करने के बाद कहा:

“7. सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 9 के तहत न्यायालय को उन मुकदमों को छोड़कर सिविल प्रकृति के सभी मुकदमों की सुनवाई करने का अधिकार क्षेत्र होगा, जिन अंतर्गत संज्ञान या तो स्पष्ट रूप से या निहित रूप से वर्जित है। इसलिए, एक क़ानून, स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ से, किसी विशेष मामले के संबंध में दीवानी न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र को बाधित कर सकता है। उक्त मामले के संबंध में किसी न्यायाधिकरण को केवल विशेष अधिकारिता प्रदान करना अपने आप में दीवानी अदालतों के अधिकार क्षेत्र को बाहर नहीं करता है। क़ानून सिविल न्यायालयों की अधिकारिता को हटाने के लिए विशिष्ट रूप से प्रावधान कर सकता है; भले ही ऐसा कोई विशिष्ट बहिष्करण न हो, यदि यह एक दायित्व पैदा करता है जो पहले मौजूद नहीं है और पीड़ित पक्ष के लिए एक विशेष और विशेष उपाय देता है, तो इसके द्वारा प्रदान किए गए उपाय का पालन किया जाना चाहिए। यही सिद्धांत लागू होगा यदि क़ानून ने उस विशेष मंच के लिए प्रावधान किया था जिसमें उपचार किया जा सकता था। ऐसे मामलों में भी दीवानी अदालत का अधिकार क्षेत्र पूरी तरह से समाप्त नहीं होता है। दीवानी न्यायालय में एक मुकदमा हमेशा एक क़ानून द्वारा बनाए गए न्यायाधिकरण के आदेश पर प्रश्न उठाने के लिए होगा, भले ही उसका आदेश, स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ से, शून्य बना दिया गया हो, अगर उक्त न्यायाधिकरण अपनी शक्ति का दुरुपयोग करता है या अधिनियम के अंतर्गत कार्य नहीं करता है, लेकिन इसके प्रावधानों का उल्लंघन करता है।” (जोर दिया गया) 41। धुलाभाई (ऊपर) और फ़र्म सेठ राधा किशन (ऊपर) में इस न्यायालय के निर्णय इस तथ्य क़ानूनी स्थिति को दोहराते हैं कि यदि आक्षेपित कार्य क़ानून के अंतर्गत नहीं है, लेकिन इसके प्रावधानों का उल्लंघन है, तो 564

/

[2023] 14 एस सी आर।

दीवानी न्यायालय की अधिकारिता को पूरी तरह से समाप्त नहीं किया जाता है, भले ही क़ानून ने दायित्व पैदा किया हो और पीड़ित व्यक्ति को एक विशिष्ट उपचार प्रदान किया हो।

42. उपरोक्त क़ानूनी सिद्धांत के आलोक में, वादी-प्रत्यर्थी की ओर से तर्क यह है कि चूंकि 1959 के अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (2) के अंतर्गत अनुध्यात नोटिस अधिग्रहण अधिसूचना से पहले भूमि के मालिक को नहीं दिया गया था, इसलिए अधिसूचना अमान्य होगी और इसलिए, सिविल न्यायालय के पास इसे शून्य मानते हुए उचित राहत देने का अधिकार क्षेत्र होगा, इसके बावजूद कि इसे कोई विशिष्ट चुनौती नहीं है।

43. मेरे विचार में, उपरोक्त निवेदन निम्नलिखित कारणों से स्वीकार्य नहीं है:

(क) 1959 के अधिनियम की धारा 52 (1) के अंतर्गत अधिसूचना जारी करने की अधिग्रहण निकाय की अधिकार क्षेत्र की शक्ति को कोई चुनौती नहीं है, इसलिए अधिसूचना 1959 के अधिनियम के अंतर्गत है और 1959 के अधिनियम के दायरे से बाहर नहीं है।

(ख) यह वादी का मामला नहीं है कि विवादग्रस्त भूमि की बिक्री-विलेखों के अनुसार, अधिग्रहण अधिसूचना की तारीख से पहले, वादी का नाम अधिकारों के रिकॉर्ड में दर्ज किया गया था, फिर भी अधिग्रहण से पहले धारा 52 (2) के अंतर्गत उसे कोई नोटिस नहीं दिया गया था।

(ग) वादी का यह भी मामला नहीं है कि विवादित भूमि के अधिकारों के अभिलेख में पहले से दर्ज भूमि मालिकों/खतेदारों को 1959 के अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (2) के अनुसार नोटिस नहीं दिया गया था; और

(घ) एक धारणा है कि आधिकारिक कार्य नियमित रूप से किए गए हैं (देखें -भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 114 चित्रण (ई), इसलिए, एक बार धारा 52 की उप-धारा (1) के अंतर्गत अधिसूचना जारी होने के बाद, धारा 52 की उप-धारा (4) के आधार पर, मेरे विचार में, सरकारी राजपत्र में अधिसूचना के प्रकाशन की तारीख से राज्य में सभी बाधाओं से निशुल्क भूमि के निहित होने के संबंध में एक कानूनी निर्णय लागू होगा और इसे शून्य नहीं माना जा सकता है।⁴⁴ उपरोक्त कारणों को विस्तार से बताते हुए, यह ध्यान दिया जा सकता है कि वादी और प्रतिवादी को एन. ओ. एस. मानते हुए। 2 से 4 ने विवादित 565 का एक हिस्सा खरीदा था।

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [मनोज मिश्रा, जे।]

भूमि, लेकिन यदि वे अधिकारों के अभिलेख में अपने नाम परिवर्तित नहीं करते हैं, तो राज्य को उनके स्वामित्व के बारे में कैसे पता चलेगा। इसलिए, यदि भूमि का अधिग्रहण अभिलिखित मालिकों को नोटिस देने के बाद किया जाता है, जैसा कि अपीलार्थी का मामला है, तो मेरे विचार में धारा 52 (1) के अंतर्गत अधिसूचना जारी करने में राज्य की कार्रवाई को शून्य नहीं माना जा सकता है। इससे भी अधिक, क्योंकि राज्य के पास भूमि अधिग्रहण करने की शक्ति थी।

45. यह भी ध्यान दिया जा सकता है कि हमारे समक्ष की गई प्रस्तुतियों से ऐसा प्रतीत होता है कि अधिग्रहण की कार्यवाही वर्ष 1972 में 1959 के अधिनियम की धारा 52 (2) के अंतर्गत शुरू की गई थी और उसके बाद वर्ष 1974 में धारा 52 की उप-धारा (1) के अंतर्गत अधिसूचना प्रकाशित की गई थी। वादी और प्रतिवादी सं। 2 4 तक न तो यह दावा करते हैं कि उन्हें इससे पहले अधिकारों के रिकॉर्ड में दर्ज किया गया था, न ही वे यह दावा करते हैं कि किसी भी दर्ज किए गए मालिक को नोटिस नहीं दिया गया था। महत्वपूर्ण रूप से, वादी 1959 अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (1) के अंतर्गत अधिसूचना के प्रकाशन पर विवाद नहीं करता है। वास्तव में, वादी का दावा है कि वह प्रतिवादी एन. ओ. एस. के साथ है। 2 से 4 वर्ष 1970 के विक्रय-विलेखों के अनुसार भूमि के स्वामी थे, फिर भी उन्हें धारा 52 की उप-धारा (1) के अंतर्गत अधिसूचना से पहले धारा 52 की उप-धारा (2) के अंतर्गत नोटिस नहीं दिया गया था और इसलिए, धारा 52 की उप-धारा (1) के अंतर्गत अधिसूचना अवैध और शून्य है।

46. आहूजा इंडस्ट्रीज (उपरोक्त) में, एक अन्य भूमि अधिग्रहण विधि के अंतर्गत कुछ हद तक इसी तरह के दावे को खारिज कर दिया गया था। उस मामले में, जिस अपीलार्थी ने इस न्यायालय के समक्ष अपील का नेतृत्व किया था, उसने 10.02.1993 पर भूमि का एक टुकड़ा खरीदा था। हालाँकि, उक्त भूमि को अधिकारों के अभिलेख में उनके नाम में परिवर्तित नहीं किया गया था, जो उस व्यक्ति का नाम दिखाता रहा जिसने अपीलार्थी के विक्रेता को भूमि बेची थी। इसके बाद, उक्त भूमि और आसपास की भूमि का अधिग्रहण अधिसूचना दिनांक 30.10.1997 के माध्यम से किया गया था। अपीलार्थी ने अधिग्रहण पर सवाल उठाते हुए दावा किया कि कर्नाटक औद्योगिक क्षेत्र विकास अधिनियम, 1966 की धारा 28 (2) और 28 (6) के अंतर्गत उसे कोई नोटिस नहीं दिया गया था और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के इस तरह के उल्लंघन ने अधिग्रहण की कार्यवाही को दूषित कर दिया था। यह भी तर्क दिया गया कि कर्नाटक भूमि राजस्व अधिनियम, 1964 की धारा 127, 128 और 129 ने पंजीकरण अधिकारी पर अधिकारों के अभिलेख में अपना नाम दर्ज करने के लिए राजस्व प्राधिकरण को एक रिपोर्ट देने का दायित्व डाल दिया है और ऐसा करने में उसकी विफलता के परिणामस्वरूप अपीलार्थी को नोटिस की सेवा नहीं दी जाती है, जिससे वह अपनी आपत्तियों को दर्ज करने के अवसर से वंचित हो जाता है, जिससे उसे नुकसान या नुकसान नहीं होना चाहिए।

566

/

[2023] 14 एस सी आर।

47. उपरोक्त प्रस्तुतियों से निपटने के लिए, आहूजा इंडस्ट्रीज (उपरोक्त) में, यह आदेश देने पर कि मालिकों/अधिभोगियों, या उनके प्रतिनिधियों को नोटिस जारी किए गए थे/दिए गए थे, जैसा कि अधिकारों के रिकॉर्ड में दिखाया गया है, और अपीलार्थी ने अधिकारों के रिकॉर्ड में अपना नाम परिवर्तित नहीं कराया था, इस न्यायालय ने पहले के निर्णयों पर ध्यान देने के बाद कहा:

“12. विंकी दिलावरी बनाम अमृतसर इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट [(1996) 11 एस. सी. सी. 644] के मामले में इस न्यायालय ने यह विचार रखा है कि उन व्यक्तियों को व्यक्तिगत नोटिस देने में विफलता जिनके नाम उनके पक्ष में किसी भी बिक्री के अनुसरण में आधिकारिक रिकॉर्ड-ऑफ-राइट्स में परिवर्तित नहीं किए गए हैं, अधिग्रहण की कार्यवाही को दूषित नहीं करता है। इसी तरह का दृष्टिकोण डब्ल्यू. बी. हाउसिंग बोर्ड बनाम बृजेंद्र प्रसाद गुप्ता [(1997) 6 एस. सी. सी. 207] में लिया गया था जिसमें इस न्यायालय ने कहा था: (एस. सी. सी. पी. 214, पैरा 8):

“यह कलेक्टर के कर्तव्य का हिस्सा नहीं है कि वह व्यक्तियों के स्वामित्व की बारी-बारी से जांच करे। हमारी राय है कि विधि की आवश्यकताओं को पूरा किया गया था जब रिकॉर्ड-ऑफ-राइट्स के अनुसार रिकॉर्ड किए गए मालिकों को नोटिस दिए गए थे। पुनः हम यह

नहीं सोचते हैं कि वर्तमान जैसे मामले में, यह कलेक्टर को पंजीकरण कार्यालय से यह पता लगाने के लिए पूछताछ करनी है कि क्या भूमि तब से अभिलिखित मालिकों द्वारा बेची गई थी। विंकी दिलावरी बनाम अमृतसर इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट [(1996) 11 एस. सी. सी. 644] में, इस न्यायालय ने कहा कि सार्वजनिक अधिकारियों से उप-पंजीयक के कार्यालय में पूछताछ करने की उम्मीद नहीं की जाती थी कि संपत्ति का मालिक कौन होगा। इस प्रकार वर्तमान मामले में कलेक्टर को आधिकारिक रिकॉर्ड पर भरोसा करने के लिए न्यायसंगत ठहराया गया था क्योंकि अधिकार का रिकॉर्ड था कि भूमि के मालिक कौन थे जिन्हें अधिग्रहित करने की मांग की गई थी और विवेक के लिए आगे की जांच करने की आवश्यकता नहीं थी। इसलिए हमारा विचार है कि भूमि के मालिकों को अधिनियम की धारा 3 (2) के अंतर्गत नोटिस उचित रूप से दिए गए थे। "

13. उपरोक्त आदेश से यह देखा जा सकता है कि अधिकारों के अभिलेख में मालिक या अधिभोगकर्ता के रूप में दिखाए गए व्यक्ति पर नोटिस की सेवा पर्याप्त है, भले ही उक्त व्यक्ति ने उक्त अधिसूचना से पहले ही भूमि बेच दी थी, जब तक कि यह अन्यथा प्रमाणित नहीं किया जाता है कि संबंधित अधिकारियों को राजस्व रिकॉर्ड में मालिक/अधिभोगकर्ता के रूप में दर्ज लोगों के अलावा किसी अन्य व्यक्ति के अधिकारों या हितों की जानकारी थी। यह भी माना जाता है कि कलेक्टर भूमि के स्वामित्व के बारे में बारी-बारी से जांच करने के लिए बाध्य नहीं है। यदि खरीदार का नाम 567

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [मनोज मिश्रा, जे।]

अधिकारों के अभिलेख में अभी तक दर्ज नहीं किया गया है तो ऐसे व्यक्ति पर गैर-सेवा अधिग्रहण कार्यवाही को दूषित नहीं करती है। मान लीजिए कि अपीलार्थी ने उक्त भूमि के मालिक या अधिभोगकर्ता के रूप में राजस्व अभिलेख में अपना नाम दर्ज नहीं कराया था और इसलिए वह उस पर नोटिस न दिए जाने और न ही उसे सुनवाई देने में विफलता के बारे में शिकायत कर सकता था। यह तर्क कि भूमि राजस्व अधिनियम के प्रावधान के अनुसार राजस्व अधिकारियों को अपने पक्ष में बिक्री के बारे में सूचित करने या उनसे अपने नाम पर कथा स्थानांतरित करने का अनुरोध करने का उनकी ओर से कोई दायित्व नहीं था, खड़ा नहीं हो सकता क्योंकि यह सहायक दस्तावेजों के साथ किसी भी अभिवचन के संदर्भ में रिकॉर्ड पर नहीं लाया गया है कि वास्तव में अपीलार्थी ने अपने पक्ष में बिक्री विलेख के पंजीकरण के समय अधिकारों के रिकॉर्ड और अपने नाम के रजिस्टर में आवश्यक प्रविष्टियां करने के लिए भुगतान किया था। इसके अलावा, राजस्व प्राधिकरणों की ओर से प्रविष्टियां करने में विफलता अधिनियम के अंतर्गत अधिकारियों पर एक घुमावदार जांच करने और एक ऐसे मालिक का पता लगाने का प्रयास करने का कोई दायित्व नहीं डालेगी जिसने बाद में पिछले मालिक से भूमि खरीदी हो। राजस्व प्राधिकरण की ओर से बाद के मालिक के पक्ष में उत्परिवर्तन के रजिस्टर में प्रविष्टि करने में विफलता अधिग्रहण कार्यवाही

या उसकी सेवा पर आपत्तियां आमंत्रित करने वाली सूचना जारी नहीं करने के कारण अधिग्रहण कार्यवाही को विधि ी रूप से खराब नहीं करेगी। "

(जोर दिया गया) 48। आहूजा इंडस्ट्रीज (उपरोक्त) में निर्णय को ध्यान में रखते हुए, मेरे विचार में, जो कानूनी स्थिति सामने आती है, वह यह है कि यदि अधिग्रहण की जाने वाली प्रस्तावित भूमि से संबंधित अधिकारों के रिकॉर्ड में मालिक का नाम दर्ज नहीं किया जाता है, तो राज्य के अधिकारियों पर यह पता लगाने के लिए कोई कानूनी बाध्यता नहीं है कि अधिग्रहण अधिसूचना जारी करने से पहले उस पर नोटिस की सेवा लागू करने के लिए इसका वास्तविक मालिक कौन है। ऐसी परिस्थितियों में, मालिक को नोटिस देने के वैधानिक दायित्व का पर्याप्त अनुपालन होगा यदि अधिकारों के रिकॉर्ड में दर्ज किए गए मालिकों को नोटिस दिया जाता है, जब तक कि यह स्पष्ट रूप से साबित नहीं हो जाता है कि अधिकारों के रिकॉर्ड में दर्ज किए गए मालिकों के अलावा वास्तविक मालिकों को राजस्व अधिकारियों को पता था।

49. तत्काल मामले में, वादी का मामला यह नहीं है कि अधिकारों के रिकॉर्ड में उसका नाम परिवर्तित किया गया था, बल्कि उसका मामला यह है कि जिला 568

/

[2023] 14 एस सी आर।

प्रशासन को जमीन पर उनके अधिकार के बारे में पता था क्योंकि उन्होंने उस कृषि भूमि को गैर-कृषि भूमि में बदलने के लिए एनओसी जारी की थी। उपरोक्त दावे की शुद्धता का परीक्षण करने के लिए, मैंने संशोधित वाद का अध्ययन किया है। उस प्रभावी अधिनियम के प्रासंगिक अभिकथन संशोधित वाद के पैराग्राफ 1 (बी) में हैं। उसी को ध्यान से पढ़ने से संकेत मिलता है कि वादी की याचिका यह थी कि उसने विवादित भूमि के तीन बीघा में से एक बीघा को गैर-कृषि उपयोग के लिए परिवर्तित करने की मांग की थी और इसके संबंध में, एक अनुकूल रिपोर्ट दी गई थी जिसके परिणामस्वरूप जिला मजिस्ट्रेट द्वारा एक बीघा भूमि के गैर-कृषि उपयोग के लिए एनओसी जारी की गई थी। हालाँकि, शिकायत में इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि एन. ओ. सी. मांगने के समय वादी द्वारा राज्य/प्रशासन के अधिकारियों के समक्ष पूरी विवादित भूमि के बिक्री-विलेख प्रस्तुत किए गए थे। इन परिस्थितियों में, मेरे विचार में, राज्य पर बिक्री-विलेखों की एक रचनात्मक सूचना नहीं लगाई जा सकती है। इसलिए, मैं इस तर्क को अस्वीकार करता हूँ कि विवादित भूमि के एक बीघा के गैर-कृषि उपयोग के लिए एन. ओ. सी. जारी करके, राज्य ने 3 बीघा वाली पूरी भूमि के संबंध में वादी के स्वामित्व के बारे में जानकारी प्राप्त की।

50. यह मानते हुए भी कि एन. ओ. सी. जारी करने से राज्य को वादी के अधिकार के बारे में जानकारी मिली, यह उस एक बीघा भूमि के संबंध में हो सकता है जिसे गैर-कृषि उपयोग के लिए परिवर्तित किया गया था। लेकिन यह इस अपील पर निर्णय लेने के लिए सामग्री नहीं

होगी क्योंकि अपीलार्थी ने संशोधित लिखित बयान में भूमि के उस हिस्से पर अपना दावा पहले ही छोड़ दिया है। वास्तव में, निचली विचारण न्यायालय पहले ही उस हिस्से के संबंध में वादी के पक्ष में एक डिक्री पारित कर चुकी है जो वास्तविकता प्राप्त कर चुका है। इस प्रकार, वह एक बीघा भूमि वर्तमान अपील का विषय नहीं है।

51. उपरोक्त चर्चा के आलोक में, मेरे विचार में, एक बार जब इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि भूमि अधिग्रहण के संबंध में अधिसूचना जारी की गई थी और 1959 अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (1) के अंतर्गत विधिवत प्रकाशित की गई थी, तो भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 114 के चित्रण (ई) के अंतर्गत एक धारणा उत्पन्न होगी कि अधिसूचना 1959 अधिनियम के प्रावधानों के अनुरूप थी। इस धारणा को, मेरे विचार में, वादी द्वारा खारिज नहीं किया गया है, क्योंकि इसके संबंध में कोई विशिष्ट सी याचिका नहीं है: (क) अधिसूचना जारी करने वाले व्यक्ति की शक्ति/अधिकार की कमी; और (ख) निर्धारित प्रक्रिया का पूरी तरह से पालन नहीं किया जा रहा है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि एक याचिका है कि 569 की धारा 52 की उप-धारा (2) के अंतर्गत विचार किया गया है।

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [मनोज मिश्रा, जे।]

1959 का अधिनियम वादी को अधिसूचना से पहले लागू नहीं किया गया था, लेकिन इस बात का कोई अनुरोध नहीं है कि अधिकारों के अभिलेख में मालिक के रूप में दर्ज किसी भी व्यक्ति को कोई नोटिस जारी नहीं किया गया था और न ही दिया गया था। इसलिए, एक बार जब यह स्थापित हो जाता है कि आहूजा इंडस्ट्रीज (उपरोक्त) में निर्धारित विधि को ध्यान में रखते हुए, भूमि अधिग्रहण के लिए अधिसूचना जारी करने की तारीख को अधिकारों के रिकॉर्ड में वादी को मालिक के रूप में दर्ज नहीं किया गया था, तो मेरा विचार है कि 1959 के अधिनियम की धारा 52 (2) के अंतर्गत, वादी जैसे गैर-दर्ज मालिक पर केवल नोटिस की गैर-सेवा, धारा 52 (1) के अंतर्गत अधिग्रहण अधिसूचना को अमान्य नहीं कर देगी। इस प्रकार, दीवानी न्यायालय 1959 के अधिनियम की धारा 52 (1) के अंतर्गत अधिसूचना को अमान्य नहीं मान सकता था। मुद्दा नं. (i) तदनुसार निर्णय लिया जाता है।

मुद्दा सं. (ii)-क्या अधिग्रहण अधिसूचना द्वारा कवर की गई भूमि के संबंध में, निषेधाज्ञा के लिए वादी का मुकदमा, घोषणा की मांग किए बिना और वह भी, राज्य को प्रतिवादी के रूप में शामिल किए बिना, बनाए रखने योग्य है?

52. जैसा कि मैंने अभिनिर्धारित किया है कि अधिग्रहण अधिसूचना की अवहेलना शून्य के रूप में नहीं की जा सकती थी, अब जो प्रश्न विचार के लिए उत्पन्न होगा वह यह है कि क्या वादी का निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा, एक घोषणात्मक राहत की मांग किए बिना, एक दीवानी न्यायालय में बनाए रखने योग्य होगा।

53. इस स्तर पर, पुनरावृत्ति की कीमत पर, यह देखा जा सकता है कि शुरू में मुकदमा ट्रस्ट को रोकने के लिए निषेधाज्ञा के लिए शुरू किया गया था (यानी, प्रतिवादी नं. 1- अपीलार्थी)

विधि की उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना भूमि का कब्जा लेने से। जब, लिखित कथन में, अपीलार्थी ने एक विशिष्ट याचिका दायर की कि भूमि का अधिग्रहण पहले ही कर लिया गया था और मुआवजे का भुगतान किया गया था, तो वाद में यह कहते हुए संशोधन किया गया कि मुकदमे के लंबित रहने के दौरान कब्जा ले लिया गया था और इसलिए, न्यास को कब्जा बहाल करने के लिए एक निर्देश जारी किया जाना चाहिए। अपीलार्थी के मामले की जानकारी के बावजूद कि भूमि का अधिग्रहण किया गया है, कोई घोषणात्मक राहत, या तो अधिसूचना को अमान्य घोषित करने या वादी को मालिक घोषित करने के लिए, इस कानूनी स्थिति के बावजूद मांगी गई थी कि 1959 के अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (1) के अंतर्गत अधिसूचना के प्रकाशन की तारीख से 1959 की धारा 52 की उप-धारा (4) के अंतर्गत भूमि राज्य में सभी बाधाओं से निशुल्क होगी।

570 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 14 एस. सी. आर.

54. अनाथुला सुधाकर बनाम पी. बुची रेड्डी **24** में, इस न्यायालय ने

सामान्य सिद्धांतों को निर्धारित करने का अवसर जब स्थायी निषेधाज्ञा के लिए केवल एक मुकदमा होगा, और जब घोषणा और/या कब्जे के लिए एक मुकदमा दायर करना आवश्यक होगा, जिसमें परिणामी राहत के रूप में निषेधाज्ञा होगी। उस निर्णय का प्रासंगिक हिस्सा नीचे दिया गया है:

“13. स्थायी निषेधाज्ञा के लिए केवल मुकदमा कब होगा, और घोषणा के लिए मुकदमा दायर करना और/या परिणामी राहत के रूप में निषेधाज्ञा के साथ कब्जा करना कब आवश्यक है, इस बारे में सामान्य सिद्धांत अच्छी तरह से तय किए गए हैं। हम उन्हें संक्षेप में संदर्भित कर सकते हैं।

13.1. जहां कोई वादी किसी संपत्ति के वैध या शांतिपूर्ण कब्जे में है और इस तरह के कब्जे में प्रतिवादी द्वारा हस्तक्षेप किया जाता है या धमकी दी जाती है, एक निषेधाज्ञा सरलीकरण के लिए मुकदमा होगा। एक व्यक्ति को किसी भी व्यक्ति के खिलाफ अपने कब्जे की रक्षा करने का अधिकार है जो निषेधात्मक निषेधाज्ञा की मांग करके एक बेहतर शीर्षक साबित नहीं करता है। लेकिन गलत कब्जे वाला व्यक्ति सही मालिक के खिलाफ निषेधाज्ञा का हकदार नहीं है।

13.2. जहां वादी का अधिकार विवादित नहीं है, लेकिन उसके कब्जे में नहीं है, उसका उपाय यह है कि वह कब्जे के लिए मुकदमा दायर करे और यदि आवश्यक हो, तो इसके अलावा एक निषेधाज्ञा की मांग करे। कब्जे से बाहर कोई व्यक्ति, कब्जे की राहत का दावा किए बिना, निषेधाज्ञा की राहत नहीं ले सकता है।

13.3. जहां वादी के कब्जे में है, लेकिन संपत्ति पर उसका अधिकार विवाद में है, या एक बादल के अंतर्गत है, या जहां प्रतिवादी उस पर अधिकार का दावा करता है और प्रतिवादी से बेदखल होने का खतरा भी है, तो वादी को अधिकार की घोषणा और निषेधाज्ञा की परिणामी राहत के लिए मुकदमा करना होगा। जहां वादी का अधिकार संदेह के घेरे अंतर्गत

है या विवाद अंतर्गत है और वह कब्जे अंतर्गत नहीं है या कब्जा स्थापित करने अंतर्गत सक्षम नहीं है, अनिवार्य रूप से वादी को घोषणा, कब्जे और निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा दायर करना होगा।

14. हालाँकि, हम स्पष्ट कर सकते हैं कि घोषणा के लिए प्रार्थना केवल तभी आवश्यक होगी जब प्रतिवादी द्वारा अधिकार से इनकार या वादी के अधिकार को चुनौती देने से संपत्ति पर वादी के अधिकार पर संदेह पैदा हो।

24 (2008) 4 एससीसी 594 571

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [मनोज मिश्रा, जे।]

कहा जाता है कि जब किसी संपत्ति पर उसके स्वामित्व में कुछ स्पष्ट दोष होता है, या जब उस पर किसी तीसरे पक्ष का कुछ प्रथम दृष्टया अधिकार बनाया जाता है या दिखाया जाता है, तो किसी व्यक्ति के स्वामित्व पर बादल छा जाता है। घोषणा के लिए एक कार्रवाई, संपत्ति के शीर्षक पर बादल को हटाने का उपाय है। दूसरी ओर, जहां वादी के पास दस्तावेजों द्वारा समर्थित स्पष्ट अधिकार है, यदि कोई अतिक्रमणकारी बिना किसी अधिकार के दावे के या बिना किसी स्पष्ट अधिकार के कोई मध्यस्थ, केवल वादी के अधिकार से इनकार करता है, तो यह वादी के अधिकार पर संदेह पैदा करने के बराबर नहीं है और वादी के लिए घोषणा के लिए मुकदमा करना आवश्यक नहीं होगा और निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा पर्याप्त हो सकता है। जहाँ वादी, यह मानते हुए कि प्रतिवादी केवल एक अतिचारकर्ता या बिना अधिकार के एक गलत दावेदार है, केवल निषेधाज्ञा के लिए एक मुकदमा दायर करता है, और ऐसे मुकदमे में, प्रतिवादी अपने बचाव में अपने द्वारा दावा किए गए अधिकार या अधिकार के विवरण का खुलासा करता है, जिससे वादी के अधिकार पर गंभीर विवाद या संदेह पैदा होता है, तो वादी को शिकायत में संशोधन करने और मुकदमे को घोषणा के लिए एक में परिवर्तित करने की आवश्यकता होती है। वैकल्पिक रूप से, वह घोषणा और निषेधाज्ञा के लिए एक व्यापक मुकदमा दायर करने के लिए न्यायालय की अनुमति के साथ खाली निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा वापस ले सकता है। निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा खारिज होने के बाद भी, वह परिणामी राहत के साथ घोषणा के लिए मुकदमा दायर कर सकता है, जहां मुकदमे में केवल कब्जे का मुद्दा उठाया गया है न कि स्वामित्व का कोई मुद्दा। "

(जोर दिया गया) 55। तत्काल मामले में, प्रतिवादी नं. 1 (अर्थात्, इसमें अपीलार्थी) स्पष्ट था कि विवादित भूमि का अधिग्रहण पहले ही किया जा चुका था। इसलिए, 1959 के अधिनियम की धारा 52 (4) के प्रावधानों के आलोक में, वादी के शीर्षक पर एक बादल था। इसके अलावा, मुकदमे के लंबित रहने के दौरान, वादी ने स्वीकार किया कि कब्जा भी ले लिया गया था। इन परिस्थितियों में, अनथुला सुधाकर (उपरोक्त) मामले में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि के आलोक में, अधिग्रहण अधिसूचना की वैधता के लिए एक घोषणात्मक राहत की मांग किए बिना, मेरे विचार में, केवल निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा बनाए रखने योग्य नहीं था। 56. ऊपर जो चर्चा की गई है, उसके अलावा, इस आशय के कई निर्णय हैं कि सार्वजनिक

उद्देश्य के लिए अनिवार्य भूमि अधिग्रहण कानूनों के अंतर्गत भूमि अधिग्रहण, अधिग्रहण अधिसूचना की वैधता पर आम तौर पर सिविल कोर्ट में सवाल नहीं उठाया जा सकता है, हालांकि इसकी वैधता पर 572 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 14 एस. सी. आर. के अंतर्गत अपनी शक्तियों का उपयोग करके एक उच्च न्यायालय के समक्ष सवाल उठाया जा सकता है।

भारत का संविधान। बिहार राज्य बनाम धीरेन्द्र कुमार और अन्य 25,

1894 के अधिनियम की धारा 4 (1) के अंतर्गत एक अधिसूचना सार्वजनिक उद्देश्य के लिए अन्य भूमि के साथ विवादित भूमि का अधिग्रहण करने पर प्रकाशित की गई थी। धारा 6 के अंतर्गत घोषणा 27.03.1957 पर प्रकाशित की गई थी और भूमि का कब्जा 22.03.1957 पर लिया गया था। उस जमीन पर कई अतिक्रमण किए गए थे। जब अतिक्रमणकारियों को बेदखल करने के लिए कदम उठाए गए, तो एक मुकदमा दायर किया गया। उस मुकदमे में, सी. पी. सी. के आदेश 39 नियम 1 के अंतर्गत अस्थायी निषेधाज्ञा की मांग करने वाला एक आवेदन दायर किया गया था। निचली विचारण न्यायालय ने पाया कि एक विचारणीय मुद्दा मौजूद है और इस तरह वाद के निपटारे तक प्रतिवादियों को वादी को बेदखल करने से रोकने के लिए निषेधाज्ञा जारी की। निचली विचारण न्यायालय के आदेश के खिलाफ मामला उच्च न्यायालय में गया। उच्च न्यायालय ने अस्थायी निषेधाज्ञा में संशोधन किया और यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया। इसके बाद, मामला इस न्यायालय में गया। इस न्यायालय द्वारा विचार के लिए जो प्रश्न उठाया गया था वह यह था कि क्या एक दीवानी मुकदमा बनाए रखने योग्य होगा और क्या अंतरिम निषेधाज्ञा जारी की जा सकती है जहां 1894 अधिनियम के अंतर्गत कार्यवाही 1894 अधिनियम की धारा 9 के अंतर्गत जारी किए गए नोटिस के अनुसार की गई थी। उक्त प्रश्न से निपटने के लिए, यह आयोजित किया गया था:

“3. ... अधिनियम के प्रावधानों को सार्वजनिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रतिष्ठित क्षेत्र की शक्ति का प्रयोग करते हुए राज्य द्वारा भूमि अधिग्रहण करने के लिए बनाया गया है। राज्य को एस में निहित वैधानिक आवश्यकताओं का पालन करने का आदेश दिया गया है।⁴ और एस।⁶ 1984 के अधिनियम 68 द्वारा संशोधित अधिनियम के अंतर्गत परिकल्पित पत्रों और स्थानीय प्रकाशनों में प्रकाशन की सीमा और प्रक्रियात्मक चरणों के भीतर अधिसूचना और घोषणा के उचित प्रकाशन द्वारा अधिनियम। एस के अंतर्गत अधिसूचना और घोषणा के प्रकाशन में।⁶, सार्वजनिक उद्देश्य स्पष्ट हो जाता है और निर्णायक हो जाता है। इसके बाद, राज्य भूमि अधिग्रहण कार्यालय को भूमि अधिग्रहण के साथ आगे बढ़ने और पुरस्कार देने के लिए अधिकृत करने का हकदार है। धारा 11 ए अब एस के अंतर्गत परिकल्पित प्रकाशन की अंतिम तिथि से 2 साल के भीतर पुरस्कार देने की सीमा निर्धारित करती है।⁶ अधिनियम से। एक उपयुक्त मामले में, जहां सरकार को तत्काल भूमि पर कब्जा करने की

आवश्यकता है, वह एस के अंतर्गत शक्ति का प्रयोग करेगी। 17(4) अधिनियम और इसके अंतर्गत जांच को समाप्त करना

25 (1995) 4 एससीसी 229 573

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [मनोज मिश्रा, जे।]

धारा 5-उ. उस पर, राज्य एस के अंतर्गत पक्षों को नोटिस जारी करने का हकदार है। 9 और 15 दिनों की समाप्ति पर, राज्य पुरस्कार दिए जाने से पहले ही तत्काल कब्जा करने का हकदार है। अन्यथा, यह एस के अंतर्गत पुरस्कार के बाद कब्जा कर लेगा। 12. इस प्रकार, यह देखा जा सकता है कि यह अधिनियम अपने आप में एक पूर्ण संहिता है और इसका उद्देश्य सार्वजनिक उद्देश्य की पूर्ति करना है। इसलिए, हम यह सोचने के लिए इच्छुक हैं, जैसा कि वर्तमान में सलाह दी गई है, कि आवश्यक निहितार्थ से दीवानी न्यायालय की एस के अंतर्गत मामले का संज्ञान लेने की शक्ति है। 9 सी. पी. सी. को बाहर रखा गया है, और एक दीवानी न्यायालय के पास एस के अंतर्गत अधिसूचना की वैधता या वैधता के प्रश्न पर जाने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। 4 और एस के अंतर्गत घोषणा। 6, संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत एक कार्यवाही में उच्च न्यायालय द्वारा छोड़कर। इसलिए, दीवानी मुकदमा स्वयं रखरखाव योग्य नहीं था। जब ऐसी स्थिति होती है, तो निचली विचारण न्यायालय का यह कहना कि प्रथम दृष्टया एक विचारणीय मुद्दा है, अस्थिर है। इसके अलावा, कब्जा पहले ही ले लिया गया था और आवास बोर्ड को सौंप दिया गया था। इसलिए, निषेधाज्ञा का आदेश अधिकार क्षेत्र के बिना था। "

(बल दिया गया)

57. लक्ष्मी चंद बनाम ग्राम पंचायत, करारिया 26 में,

अधिग्रहण और पुरस्कार को इस घोषणा के लिए एक दीवानी मुकदमा दायर करके चुनौती दी गई थी कि भूमि का अधिग्रहण नहीं किया जा सकता है। उस मुकदमे में, मुकदमे की रखरखाव के संबंध में एक प्रारंभिक मुद्दा विरचित किया गया था। निचली विचारण न्यायालय ने माना कि मुकदमा विचारणीय नहीं था। निचली विचारण न्यायालय के निर्णय पर रोक लगा दी गई थी। यह मामला इस न्यायालय के समक्ष आया। इस न्यायालय के समक्ष याचिकाकर्ता की ओर से यह तर्क दिया गया था कि एक बार भूमि अधिग्रहण कार्यालय द्वारा अधिग्रहण की कार्यवाही को हटा दिए जाने के बाद, उनके पास इसे फिर से खोलने और 1894 अधिनियम की धारा 11 के अंतर्गत निर्णय देने का कोई अधिकार क्षेत्र या शक्ति नहीं थी। यह तर्क दिया गया था कि अधिकार क्षेत्र के अभाव में यह पुरस्कार पूरी तरह से अवैध है। तथ्यों को ध्यान में रखने के बाद, इस न्यायालय ने निर्णय दिया:

"2. ... यह देखा गया है कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 9 सिविल न्यायालय को सभी दीवानी मुकदमों की सुनवाई करने का अधिकार क्षेत्र देती है, जब तक कि वर्जित न

हो। नागरिक प्रकृति के मुकदमे का संज्ञान या तो स्पष्ट रूप से या निहित रूप से वर्जित किया जा सकता है। अधिनियम के अंतर्गत विचार की गई प्रक्रिया एक विशेष है

26 (1996) 7 एस. सी. सी. 218 574

/

[2023] 14 एस सी आर।

सार्वजनिक उद्देश्य को प्रभावी बनाने के लिए परिकल्पित प्रक्रिया, सार्वजनिक उद्देश्य के उपयोग के लिए भूमि का अनिवार्य रूप से अधिग्रहण। अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत अधिसूचना और धारा 6 के अंतर्गत घोषणा को उसके अंतर्गत विचार किए गए तरीके से प्रकाशित किया जाना आवश्यक है। यह निष्कर्ष सार्वजनिक उद्देश्य और उसमें उल्लिखित भूमि के विस्तार को निर्णायकता प्रदान करता है। पुरस्कार धारा 11 के अंतर्गत दिया जाना चाहिए जैसा कि इसके अंतर्गत परिकल्पना की गई है। असंतुष्ट दावेदार को धारा 18 के अंतर्गत संदर्भ का उपाय और अधिनियम की धारा 54 के अंतर्गत आगे की अपील प्रदान की जाती है। यदि सरकार भूमि पर कब्जा करने से पहले अधिग्रहण से हटने का इरादा रखती है, तो धारा 48 के अंतर्गत विचार की गई प्रक्रिया का पालन करना आवश्यक है। यदि कब्जा ले लिया जाता है, तो यह राज्य में धारा 16 के अंतर्गत निहित है, जिसमें पूर्ण स्वामित्व सभी बाधाओं से निशुल्क है और सरकार के पास अधिग्रहण से पीछे हटने की कोई शक्ति नहीं है।

3. इस प्रकार यह स्पष्ट होगा कि अधिनियम की योजना अपने आप में पूर्ण है और इस प्रकार अधिनियम के अंतर्गत उत्पन्न होने वाले मामलों का संज्ञान लेने के लिए दीवानी न्यायालय का अधिकार क्षेत्र, आवश्यक निहितार्थ से, वर्जित था। इस प्रकार दीवानी न्यायालय अधिनियम के अंतर्गत विचार की गई प्रक्रिया की अयोग्यता पर घोषणा करने के लिए अधिकार क्षेत्र से वंचित है। पीड़ित व्यक्ति को संवैधानिक अदालतों से संपर्क करने का एकमात्र अधिकार है। उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय क्रमशः अनुच्छेद 226 और 136 के अंतर्गत अपनी पूर्ण शक्ति के अंतर्गत अपनी असाधारण शक्ति के प्रयोग पर स्व-लगाए गए प्रतिबंधों के साथ। इसके अलावा, दीवानी न्यायालय के पास कोई शक्ति नहीं है। "

(जोर दिया गया) 58। उपरोक्त दो निर्णयों (अर्थात् बिहार राज्य बनाम धीरेन्द्र कुमार और लक्ष्मी चंद बनाम ग्राम पंचायत) के बाद, आयुक्त, बैंगलोर में

विकास प्राधिकरण और एक अन्य बनाम बृजेश रेड्डी और एक अन्य (ऊपर),

यह आयोजित किया गया था: "18. यह स्पष्ट है कि भूमि अधिग्रहण अधिनियम अपने आप में एक पूर्ण संहिता है और इसका उद्देश्य सार्वजनिक उद्देश्यों की पूर्ति करना है। आवश्यक निहितार्थ से, सिविल न्यायालय की धारा 9 सी. पी. सी. के अंतर्गत मामले का संज्ञान लेने की

शक्ति को बाहर रखा गया है और सिविल न्यायालय के पास धारा 575 के अंतर्गत अधिसूचना की वैधता या वैधता के प्रश्न पर जाने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है।

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थू एलआरएस। [मनोज मिश्रा, जे।]

4, संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत किसी कार्यवाही में उच्च न्यायालय को छोड़कर धारा 6 के अंतर्गत घोषणा और बाद की कार्यवाही। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि दीवानी न्यायालय अधिनियम के अंतर्गत विचार की गई प्रक्रिया की अयोग्यता पर घोषणा करने या यहां तक कि निषेधाज्ञा देने के अधिकार क्षेत्र से वंचित है। पीड़ित व्यक्ति के लिए उपलब्ध एकमात्र अधिकार अनुच्छेद 226 के अंतर्गत उच्च न्यायालय और अनुच्छेद 136 के अंतर्गत इस न्यायालय से संपर्क करना है, जिसमें उनके असाधारण शक्ति के प्रयोग पर स्वयं लगाए गए प्रतिबंध हैं। "

59. वर्तमान मामले में, अधिग्रहण एक सार्वजनिक उद्देश्य के लिए है, अर्थात् आवासीय कॉलोनी के लिए भूमि का विकास और 1959 अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (4) के आधार पर, भूमि राज्य में अधिसूचना के प्रकाशन की तारीख से सभी बाधाओं से निशुल्क थी। एक बार यह स्थिति हो जाने पर, उपरोक्त चर्चा के आलोक में, और इस न्यायालय द्वारा बिहार राज्य बनाम बिहार राज्य में निर्धारित विधि को लागू करने के लिए।

धीरेंद्र कुमार (ऊपर); लक्ष्मी चंद बनाम ग्राम पंचायत (ऊपर); और आयुक्त, बेंगलोर विकास प्राधिकरण और एक अन्य बनाम बृजेश रेड्डी और एक अन्य (ऊपर), मेरा विचार है कि

अधिग्रहण अधिसूचना द्वारा कवर की गई भूमि के संबंध में, जैसा कि विरचित किया गया मुकदमा बनाए रखने योग्य नहीं था।

60. अन्यथा भी, वाद में एक और पेटेंट दोष था क्योंकि राज्य को मुकदमे में प्रतिवादी के रूप में शामिल नहीं किया गया था। राज्य एक आवश्यक पक्ष था क्योंकि 1959 के अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (1) के अंतर्गत भूमि अधिग्रहण के लिए उठाए गए सभी कदम उसके द्वारा उठाए गए थे। और, 1959 के अधिनियम की धारा 52 की उप-धारा (4) के आधार पर, भूमि राज्य में निहित है। इसलिए, जब वादी द्वारा अधिग्रहण की वैधता पर संपार्श्विक हमला किया गया था, यह आरोप लगाते हुए कि वैध अधिग्रहण के लिए आवश्यक कदम नहीं उठाए गए थे, तो यह राज्य ही था जो प्रभावी रूप से खुलासा कर सकता था कि भूमि के वैध अधिग्रहण के लिए आवश्यक सभी आवश्यक कदम उठाए गए थे या नहीं। मामले के इस दृष्टिकोण में, मेरी राय में, मुकदमा आवश्यक पक्ष के गैर-पक्षकार के लिए भी बुरा था।

61. मेरे विचार में, प्रश्न वाद चतुराई से मसौदा तैयार करने का एक उत्कृष्ट उदाहरण है, जहां महत्वपूर्ण मुद्दों से बचा जा सकता है, जैसे कि राज्य से सीमा और प्रतिक्रिया की बाधा, पहली बार में, अधिग्रहण अधिसूचना के संबंध में कोई घोषणा नहीं मांगी गई थी और दूसरी बात,

राज्य, जिसने अधिग्रहण अधिसूचना जारी की थी और जिसमें भूमि का अधिकार एक डीमिंग फिशन, 576 द्वारा निहित था।

/

[2023] 14 एस सी आर।

एक पार्टी के रूप में शामिल नहीं किया गया था। महत्वपूर्ण मुद्दों से बचने के लिए इस तरह के चतुर मसौदे को इस न्यायालय द्वारा बार-बार अस्वीकार किया गया है क्योंकि यह एक अनुचित प्रथा है।

62. टी. अरिवंदम बनाम टी. वी. सतपाल और अन्य 27 में चेतावनी देते हुए

अदालतों को मुकदमा दायर करने के लिए कार्रवाई के कारण का भ्रम पैदा करने की कला के प्रति सचेत रहने के लिए, यह देखा गया:

“5.....विद्वान मुन्सिफ को यह याद रखना चाहिए कि यदि अभियोग के सार्थक-औपचारिक नहीं-पढ़ने पर यह स्पष्ट रूप से परेशान करने वाला और निरर्थक है, तो मुकदमा करने के अधिकार का खुलासा नहीं करने के अर्थ में, उसे आदेश 7, नियम 11 सी. पी. सी. के अंतर्गत अपनी शक्ति का प्रयोग यह ध्यान रखने के लिए करना चाहिए कि उसमें उल्लिखित आधार पूरा हो। और, यदि चतुराई से मसौदा तैयार करने से कार्रवाई के कारण का भ्रम पैदा हुआ है, तो पहली सुनवाई में इसे शुरुआत में ही खत्म कर दें। ”

(जोर दिया गया) 63। 1999 के निरसन अधिनियम के प्रवर्तन से पहले कब्जा लेने में विफलता के लिए, अधिकतम सीमा कानूनों के अंतर्गत राज्य में अधिशेष भूमि के निहित होने का मुद्दा उठाए जाने पर राज्य को एक मुकदमे में शामिल करने की आवश्यकता है।

श्री सौरव जैन और एक अन्य बनाम में इस न्यायालय द्वारा उजागर किया गया। मेसर्स एबीपी डिजाइन एंड अदर **(2018 के एसएलपी (सी) No.29868 से उत्पन्न 2021 की सिविल अपील No.4448,05.08.2021 पर निर्णय लिया गया) 28** का अवलोकन करते हुए:

“36.....उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि इस बारे में कोई सामग्री सामने नहीं आ रही है कि क्या सक्षम प्राधिकारी द्वारा भूमि के मालिक से वास्तविक और भौतिक कब्जा लिया गया था और उसने अभिनिर्धारित किया कि इसके अभाव में, प्रथम प्रतिवादी, ज़ाहिद हुसैन से खरीदार के रूप में, एक वैध अधिकार बना रहेगा। उच्च न्यायालय ने इन निर्णयों में इस तथ्य के बावजूद प्रवेश किया है कि इंजीनियर ड्राफ्टिंग की एक प्रक्रिया द्वारा, प्रथम प्रतिवादी ने यू. एल. सी. आर. ए. के अंतर्गत कार्यवाही के संबंध में कोई राहत नहीं मांगी (मुकदमे की स्थिरता पर रोक लगाने के लिए) और न तो राज्य या सक्षम प्राधिकारी को शामिल किया जो चुनौती का जवाब देने की स्थिति में होता। ”

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थू एलआरएस। [मनोज मिश्रा, जे।]

64. इसमें कोई संदेह नहीं है कि तत्काल मामले में, अधिग्रहण के बाद राज्य द्वारा भूमि न्यास को हस्तांतरित कर दी गई थी, और न्यास मुकदमे में एक पक्ष था। लेकिन यह राज्य ही था जिसने न्यास के लाभ के लिए भूमि का अधिग्रहण किया था और 1959 के अधिनियम की धारा 52 (4) के आधार पर धारा 52 (1) के अंतर्गत उसके द्वारा जारी अधिसूचना के अनुसार राज्य में निहित भूमि। इसलिए, मेरे विचार में, जब निषेधाज्ञा की राहत अधिग्रहण अधिसूचना की वैधता पर निर्भर थी, तो राज्य एक आवश्यक पक्ष था क्योंकि वह अकेले ही भूमि अधिग्रहण के लिए उठाए गए कदमों के बारे में सभी अभिलेख को उचित रूप से प्रस्तुत कर सकता था। अधिग्रहण अधिसूचना को चुनौती दिए बिना और राज्य को फंसाये बिना मुकदमा दायर करना महत्वपूर्ण प्रश्नों से बचने के लिए एक चतुर चाल है। इस तरह की कवायद अस्वच्छ हाथों से न्यायालय का दरवाजा खटखटाने के समान है। यह अकेले, मेरे विचार में, जैसा कि निचली विचारण न्यायालय द्वारा भी देखा गया है, वादी को निषेधाज्ञा की विवेकाधीन राहत प्राप्त करने के लिए अयोग्य ठहराता है। इस प्रकार, मेरे विचार में, अधिग्रहण अधिसूचना द्वारा कवर की गई भूमि के संबंध में, तैयार किया गया मुकदमा न केवल एक घोषणात्मक राहत की मांग करने के लिए, बल्कि राज्य को एक पक्ष के विरचित में शामिल नहीं करने के लिए भी बनाए रखने योग्य नहीं था। मुद्दा सं. (ii) तदनुसार तय किया जाता है।

मुद्दा नं. (iii) -- क्या वादी के दीवानी मुकदमे को राजस्थान किरायेदारी अधिनियम की धारा **207 (2)** द्वारा वर्जित किया गया था?

65. इस मुद्दे को उचित रूप से संबोधित करने के लिए कि क्या सिविल न्यायालय में मुकदमा 1955 के अधिनियम की धारा 207 (2) द्वारा वर्जित था, 1955 के अधिनियम की योजना की जांच करना उपयोगी होगा और यह भी कि क्या मुकदमे में दावा की गई राहत 1955 के अधिनियम के अंतर्गत मांगी जा सकने वाली राहतों के दायरे में थी।

66. 1955 के अधिनियम की प्रस्तावना में प्रावधान है कि यह कृषि भूमि के किरायेदारी से संबंधित विधि को समेकित और संशोधित करने और भूमि सुधारों के कुछ उपायों और उससे जुड़े मामलों का प्रावधान करने के लिए एक अधिनियम है।

67. 1955 के अधिनियम की धारा 5 (24) में "भूमि" को "भूमि" के रूप में परिभाषित किया गया है।

इसका अर्थ है ऐसी भूमि जो कृषि उद्देश्यों के लिए या उसके अधीन उद्देश्यों के लिए या उपवन भूमि के रूप में या चरागाह के लिए लीज पर दी गई है या रखी गई है, जिसमें किसी जोत पर

स्थित घरों या घेरों द्वारा कब्जा की गई भूमि, या पानी से ढकी भूमि जिसका उपयोग सिंचाई या सिंधारा या अन्य समान उपज उगाने के उद्देश्य से किया जा सकता है, लेकिन अबादी भूमि को छोड़कर; इसमें 578 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 14 एस. सी. आर. के लाभ शामिल होंगे।

यह भूमि और पृथ्वी से जुड़ी चीजों से उत्पन्न होता है या पृथ्वी से जुड़ी किसी भी चीज़ से स्थायी रूप से जुड़ा होता है।

68. तत्काल मामले में, पक्षों के बीच कोई विवाद नहीं है कि विवादित भूमि के 3 बीघा में से एक बीघा को कृषि से गैर-कृषि उपयोग में बदलने के लिए आवेदन दिया गया था, और रूपांतरण शुल्क आदि लेने के बाद परिवर्तन किया गया था। यह तथ्य स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि विवादित भूमि कृषि भूमि थी और जमाबंदी (यानी अधिकारों का रिकॉर्ड) में दर्ज की गई थी। जहाँ तक उस एक बीघा भूमि का संबंध है, जिसे गैर-कृषि उपयोग में परिवर्तित कर दिया गया था, कोई विवाद नहीं बचा है क्योंकि अपीलार्थी ने उस पर अपना दावा छोड़ दिया और निचली विचारण न्यायालय ने उसके संबंध में एक डिक्री पारित की, जिसने वास्तविकता प्राप्त कर ली है। जो विवाद बना हुआ है, वह विवादित भूमि के उस 2 बीघा तक सीमित है, जो कृषि भूमि बनी हुई है।

69. 1955 के अधिनियम की धारा 207 में निम्नलिखित प्रावधान हैं:

“207. केवल राजस्व न्यायालय द्वारा संज्ञेय मुकदमे और आवेदन -

(1) तीसरी अनुसूची में निर्दिष्ट प्रकृति के सभी मुकदमों और आवेदन की सुनवाई और निर्धारण राजस्व न्यायालय द्वारा किया जाएगा। (2) राजस्व न्यायालय के अलावा कोई अन्य न्यायालय ऐसे किसी वाद या आवेदन या कार्रवाई के कारण के आधार पर किसी वाद या आवेदन का संज्ञान नहीं लेगा, जिसके संबंध में ऐसे किसी वाद या आवेदन के माध्यम से कोई राहत प्राप्त की जा सकती है।

स्पष्टीकरण-यदि कार्रवाई का कारण वह है जिसके संबंध में राजस्व न्यायालय द्वारा राहत दी जा सकती है, तो यह मायने नहीं रखता कि दीवानी न्यायालय से मांगी गई राहत राजस्व न्यायालय द्वारा दी जा सकने वाली राहत से अधिक या उससे अधिक है या उसके समान नहीं है। ”

70. 1955 के अधिनियम की धारा 256 में कहा गया है: “S.256। दीवानी न्यायालयों की अधिकारिता पर रोक।— (1) इस अधिनियम द्वारा या उसके अंतर्गत विनिर्दिष्ट रूप से अन्यथा उपबंधित किए जाने के अलावा, इस अधिनियम या उसके अंतर्गत बनाए गए नियमों के अंतर्गत उत्पन्न होने वाले किसी भी मामले के संबंध में किसी भी दीवानी न्यायालय में कोई मुकदमा या कार्यवाही नहीं होगी, जिसके लिए मुकदमे, आवेदन, अपील या अन्यथा के रूप में कोई उपाय प्रदान किया गया है।

उर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर बनाम गोर्डन दास (डी) थ्रू एलआरएस। [मनोज मिश्रा, जे।]

(2) उपरोक्त के अलावा, इस अधिनियम या उसके तहत बनाए गए नियमों द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए राज्य सरकार या किसी राजस्व न्यायालय या कार्यालय द्वारा कोई भी आदेश किसी भी दीवानी न्यायालय में प्रश्न किए जाने के लिए उत्तरदायी नहीं होगा।

"

71. प्यारेलाल बनाम शुभेंद्र पिलानिया 29 इस न्यायालय में,

बैंक ऑफ बड़ौदा बनाम मोती बाई 30 के मामले में इस न्यायालय के पहले के फैसले में कहा गया था कि 1955 के अधिनियम की धारा 256 के साथ पठित धारा 207 1955 के अधिनियम की तीसरी अनुसूची में निर्दिष्ट प्रकृति के मुकदमों और आवेदनों के संबंध में दीवानी न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र को प्रतिबंधित करती है।

72. 1955 के अधिनियम की तीसरी अनुसूची, मुकदमों, आवेदनों और अपीलों की एक सूची देती है जिन्हें अधिनियम के अंतर्गत बनाए रखा जा सकता है। प्रविष्टि 8 ए में प्रावधान है कि कार्रवाई का कारण उत्पन्न होने की तारीख से तीन साल की अवधि के भीतर सहायक कलेक्टर के न्यायालय के समक्ष निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा चलाया जा सकता है। प्रविष्टि 23-सी में यह प्रावधान है कि कार्रवाई का कारण उत्पन्न होने की तारीख से तीन साल की अवधि के भीतर सहायक कलेक्टर के न्यायालय के समक्ष स्थायी निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा चलाया जा सकता है। प्रविष्टि 5 में यह प्रावधान है कि वादी के अधिकार की घोषणा के लिए एक किरायेदार के रूप में, या खुदकशत के किरायेदार के रूप में, या एक उप-किरायेदार के रूप में, या एक संयुक्त किरायेदारी में एक हिस्से के लिए एक मुकदमा भी सहायक कलेक्टर के न्यायालय में चलाया जाना है। इसी तरह, तीसरी अनुसूची में क्रमशः 6, 23 और 23-ए प्रविष्टियों के माध्यम से, किरायेदारी अधिकारों की घोषणा या कब्जे की वसूली या अतिक्रमणकारियों को बाहर निकालने के लिए क्रमशः धारा 89, 187 और 183 के अंतर्गत मुकदमा चलाया जा सकता है।

73. एक बार जब यह स्थापित हो जाता है कि विवादित भूमि के तीन बीघा में से दो बीघा कृषि भूमि थी और इस प्रकार यह 1955 के अधिनियम के दायरे में आती है, तो मेरे विचार में, हालांकि राजस्व न्यायालय को भूमि अधिग्रहण की अधिसूचना को रद्द करने का अधिकार क्षेत्र नहीं था, जिसकी किसी भी मामले में वादी द्वारा मांग नहीं की गई थी, निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा 1955 के अधिनियम की तीसरी अनुसूची की प्रविष्टियों 5, 6, 23 और 23 ए के साथ पठित प्रविष्टियों 8 ए और 23 सी के आधार पर राजस्व न्यायालय के समक्ष बनाए रखने योग्य था। इस प्रकार, सिविल न्यायालय के समक्ष मुकदमे को 1955 के अधिनियम की धारा 256 के साथ पठित धारा 207 द्वारा वर्जित कर दिया गया था। मुद्दा नं. (ग) तदनुसार निर्णय लिया जाता है।

29 (2019) 3 एस. सी. सी. 692 30 (1985) 1 एस. सी. सी. 475 580 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 14 एस. सी. आर.

निष्कर्ष

74. जैसा कि मैंने पाया है कि मुकदमा रखरखाव योग्य नहीं है क्योंकि यह अधिग्रहण अधिसूचना द्वारा कवर की गई भूमि से संबंधित है और राजस्थान किरायेदारी अधिनियम, 1955 की धारा 256 के साथ पठित धारा 207 द्वारा भी वर्जित है, प्रतिवादी की अपील को अनुमति देने का अधिकार है और इसके द्वारा इसकी अनुज्ञात जाती है। उच्च विचारण न्यायालय के साथ-साथ प्रथम अपीलीय विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री को दरकिनार कर दिया जाता है और निचली अदालत द्वारा पारित डिक्री को बहाल कर दिया जाता है।

आदेश

राय की भिन्नता और विशिष्ट निर्णयों (न्यायमूर्ति हृषिकेश राँय ने अपील को खारिज कर दिया और न्यायमूर्ति मनोज मिश्रा ने अपील को अनुमति दी) को देखते हुए, रजिस्ट्री को मामले को एक बड़ी पीठ को भेजने के लिए भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखने का निर्देश दिया जाता है।

द्वारा तैयार किए गए हेडनोटः

मामला माननीय सीजेआई के समक्ष रखा जाएगा

निधि जैन

मामले को बड़ी पीठ को भेजने के लिए।